

गायत्रीतीर्थ
शान्तिकुञ्ज

youth.awgp.org



माँ की संस्कारशाला

सप्ताह-5



मानवीय मूल्य

स्वास्थ्य

Online पढ़ने हेतु QR कोड स्कैन करें।

शान्तिकुञ्ज-हरिद्वार

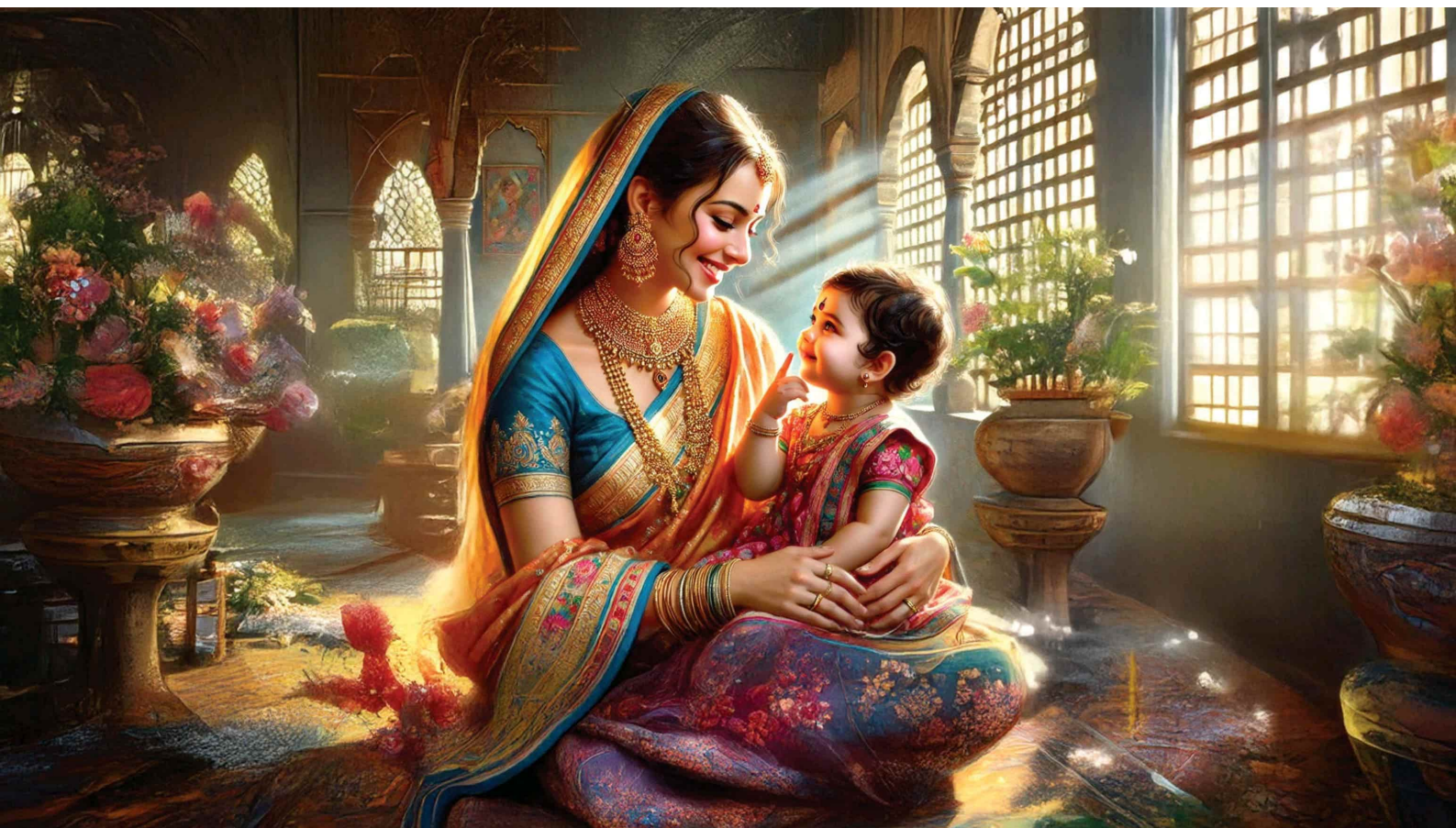
विषय सूची - 5वाँ सप्ताह

मानवीय मूल्य - स्वास्थ्य.....	7
माँ से निवेदन	9
बच्चों में स्वस्थ व मौलिक आदत डालें	10
प्रथम दिवस :	
कहानी : नाना जी का नुस्खा	13
द्वितीय दिवस :	
कहानी : चटोरा रंजन	17
तृतीय दिवस :	
कहानी : चटोरे भोजन भट्ट	20
चतुर्थ दिवस :	
कहानी : बीमारियों की जड़	23
बच्चों की समस्याओं के मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक समाधान :	
बच्चों में भोजन की स्वस्थ आदत डालें	27
पंचम दिवस :	
कहानी : मोटा गुल्लू	29
षष्ठम दिवस :	
कहानी : तोता चला शहद खाने	31
सप्तम दिवस :	
कहानी : चींटी और तितली	35
मूल्यपरक कविता :	
स्वास्थ्य का राज	37
गीत :	
हम हिन्दुस्तानी बच्चे	38
अभ्यास के बिन्दु.....	39



पांचवाँ सप्ताह
मानवीय मूल्य
स्वास्थ्य





॥ गुरुणामेव सर्वेषां माता गुरुतरा स्मृता ॥
(सब गुरुओं में माता को सर्वश्रेष्ठ गुरु माना गया है ।)98

परम वंदनीय माता जी एवं अखंड ज्योति के शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में “मां की संस्कारशाला” सप्ताहिक पाठ्यक्रम आपको प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत हर्ष हो रहा है। यह पाठ्यक्रम उन माताओं हेतु तैयार किया गया है जो अपने बच्चों को सुसंस्कारी बनाना चाहती हैं।

इस हेतु परम् पूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा रचित विशाल साहित्य भंडार से एक वर्ष के लिए 365 कहानी, 365 वेद वाक्य, 365 पहेलियां, कहावतें, संकलित की गई है। इसी प्रकार पूज्यवर के बाल निर्माण साहित्य से एक वर्ष के 52 सप्ताह हेतु 52 मानवीय मूल्य तथा हर सप्ताह बालकों के लालन-पालन में आने वाली समस्याओं के मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक समाधान भी चुने गए हैं। माताएं इसका अध्ययन कर प्रतिदिन रात को सोने से पूर्व एक कहानी बच्चों को सुनाएं तथा प्रति सप्ताह एक मानवीय मूल्य का अभ्यास कराएं साथ ही साथ एक दुर्गुण से बचने की प्रेरणा प्रदान करें। आवश्यकता अनुसार बच्चों को लोरियां कविताएं सुनाएं तथा छोटे-छोटे खेल खिलाएं।

अभ्यास हेतु आवश्यक सुझाव

1. माताएं स्वविवेक एवं अपने अनुभव से इस पाठ्यक्रम में विषय वस्तु जोड़ या घटा लें।
2. माँ अपने जीवन में घटित प्रसंग जो प्रस्तुत मूल्य से जुड़ा हो, वह भी बच्चों से साझा करें।
3. प्रस्तुत पाठ्यक्रम में मानवीय मूल्य एवं मनोवैज्ञानिक समाधान और अभ्यास के बिन्दु माँ के लिए हैं। माँ उन्हें समझें और अपने तथा बच्चे के व्यवहार में उतारने का प्रयास करें।



माँ से निवेदन

स्वस्थ रहने पर ही कोई अपना और दूसरे का भला कर सकता है, जिसे दुर्बलता और रुग्णता धीरे धीरे होगी वह निर्वाह के योग्य भी उत्पादन न कर सकेगा, दूसरे पर अवलंब रहेगा। परावलम्बन एक प्रकार से अपमानजनक स्थिति है। भारभूत होकर जीने वाले न कहीं सम्मान पाते हैं और न किसी की सहायता करने में समर्थ होते हैं। जिससे अपना भार ही सही प्रकार से उठ नहीं पाता यह दूसरों के लिए किस प्रकार कितना उपयोगी हो सकता है?

मनुष्य जन्म अगणित विशेषताओं और विभूतियों से भरा-पूरा है। किसी को भी यह छूट है कि उतना ऊँचा उठे जितना कि अब तक कोई महामानव उत्कर्ष कर सका है, पर यह सम्भव लभी है कि शरीर और मन पूर्णतया स्वस्थ हो। जो जितनी के लिए जितना उपयोगी और सहायक सिद्ध होता है उसे उसी अनुपात में सम्मान और सहयोग मिलता है। अपने और दूसरों के अभ्युदय में योगदान करना उसी से बन पड़ता है और स्वस्थ-समर्थ रहने की स्थिति बनाये रहता है।

अपंग अविकसित तो असहाय, दीन-दरिद्र दीखते हैं, पर इस पंक्ति में वे लोग भी सम्मिलित होते हैं जो दुर्बलता या रुग्णता से ग्रसित हैं। इसलिए अनेक दुःखद, दुर्भाग्यों और अभिशापों में प्रथम अस्वस्थता की ही माना गया है। प्रयत्न

यह होना चाहिए कि वैसी स्थिति न उत्पन्न होने पाये। यदि किसी कारण इस चपेट में आना भी पड़े तो वह दुर्दिन अधिक समय ठहरने न पाये। सच्चे अर्थों में जीवन उतने ही समय का माना जाता है जितना कि स्वस्थ रहकर जिया जा सका। कुछ अपवादों को छोड़कर अस्वस्थता अपना निज का उपार्जन है, भले ही वह अनजाने में, भ्रमवश या दूसरों की देखादेखी न्यौत बुलाया गया हो। सृष्टि के सभी प्राणी जीवन भर निरोग रहते हैं। मरणकाल आने पर जाना तो सभी को पड़ता है, यह नियति की व्यवस्था है। इसमें किसी का वश नहीं, पर निरोग रहना हर जीवधारी का जन्म सिद्ध अधिकार है। जिन प्राणियों

को किसी के बन्धनों में बंधे रहने की विवशता नहीं होती, वे सभी जन्म से लेकर मरण पर्यन्त निरोग रहते हैं। स्वच्छन्द जीवन जीने वाले पशु-पक्षियों में कभी किसी को बीमार नहीं पाया जाता, कोई दुर्घटनाग्रस्त हो जाय तो बात दूसरी है।

माताएं स्वास्थ्य के महत्व को समझें और घर का वातावरण, खान-पान तथा दिनचर्या को इस तरह व्यवस्थित करें कि घर के परिजन आरोग्यवान बन सकें। बच्चे अनुकरणशील होते हैं अतः माता-पिता स्वास्थ्यप्रद जीवन का आदर्श प्रस्तुत करें।





बच्चों में स्वस्थ व मौलिक आदतें डालें

घर-परिवारों में माता-पिता इस बात की अपेक्षाएँ तो बहुत रखते हैं कि बच्चों को क्या करना चाहिए, क्या नहीं ? उन्हें कैसे सुसंस्कारवान बनाया जाए, कैसे उनका दिशा-दर्शन किया जाए, परंतु इन अपेक्षाओं की पूर्ति हेतु अपने कार्य-व्यवहार में उचित आदर्श स्थापित कर अनुकूल वातावरण बनाने के प्रति वे उदासीन ही रहते हैं। बच्चों का पालन-पोषण करने, उन्हें प्रगति-पथ पर आगे बढ़ाने की जानकारीयाँ भी माँ-बाप को रहती तो हैं, परंतु वे इन सबका लाभ पूरी तरह अपने बच्चों को नहीं दिला पाते। समूचे प्राप्त ज्ञान व जानकारीयों को कार्यरूप में परिणत करने में कई बाधाएँ भी आती हैं, जो उस निर्दिष्ट आदर्श तक पहुँचने के मार्ग में होती हैं। कई बार शुद्ध आदर्शों व मान्यताओं से भरी इतनी बातें उनके मस्तिष्क में आ जाती हैं कि वे मात्र सैद्धांतिक ही लगती हैं। व्यावहारिक नहीं व कई बातें ऐसी होती हैं, जिनको करने के लिए उपयुक्त वातावरण, साधन सामग्री का अभाव रहता है।

इस हेतु एक मध्यमवर्गीय परिवार के लिए उसकी औसत स्थिति व अनुकूलता को ध्यान में रखते हुए एक आचार संहिता का अभ्यास कराया जाता है, जिसके अनुसार सभी घरों के बच्चे यदि उनका पालन करने लगे तो उनकी वर्तमान स्थिति की तुलना में कुछ अधिक प्रगति की संभावना परिलक्षित हो सकती हैं। यह आचार संहिता इस प्रकार प्रस्तावित है-



1. दिनचर्या, नित्यकर्म -

प्रातः काल सूर्योदय के पूर्व ही बच्चे शय्या त्याग दें और अपनी शय्या पर ही बच्चे हाथ जोड़कर अथवा बिना हाथ जोड़े मन ही मन भगवान की प्रार्थना करें। यह प्रार्थना अधिकाधिक ५-७ मिनट की हो सकती है। प्रार्थना किसी भी प्रकार की हो सकती है, पर उसका भाव यह रहना चाहिए कि हे परमपिता परमेश्वर ! तूने हमें जन्म दिया है, तू ही हमें ऐसी शक्ति दे कि हम आज अच्छे ही अच्छे काम करें, दुर्बलों एवं अभावग्रस्तों की सहायता करें, किसी को सताएँ नहीं, विद्या व ज्ञान प्राप्त करें व अच्छे संस्कारवान बनें, हम माता-पिता, अन्य वृद्धजनों, गुरुजनों व समाज की सेवा करें।

2. **माता-पिता को प्रणाम-** प्रार्थना करने के उपरांत बच्चे अपने माता-पिता व अन्य वृद्धजनों (अपने से बड़ों) को प्रणाम करें।

3. **ऊषापान** - बच्चों को मुँह साफ कर नित्य ही ऊषापान करना चाहिए। रात को एक गिलास पानी भरकर रख देना चाहिए: संभव हो तो ताँबे के पात्र में रात को पानी भर देना चाहिए। यह पानी पीने से विशेष



लाभ होता है; क्योंकि ताँबे में एक प्रकार की विद्युत होती है व इसके संपर्क में आने से पिए जाने वाले पानी में भी वह विद्युत आ जाती है, जो शरीर शुद्धि के लिए उपयोगी रहती है।

4. **शौच, सफाई व स्नान-** इसके उपरान्त शौच, निवृत्ति, दाँत सफाई, मुँह धोना आदि क्रियाएँ की जानी चाहिए। आधुनिक सभ्यता के प्रसादस्वरूप बच्चों में दाँतों के ब्रुश द्वारा बाजार में मिलने वाले विभिन्न प्रकार के पेस्टों से दाँत साफ करने की आदत हो गई है। प्रथमतः तो यह व्ययसाध्य हैं, द्वितीय यह विशेष लाभप्रद नहीं हैं। अब विज्ञान के प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि इन पेस्टों में जो तत्व दाँतों को साफ करता है, वह 'क्लोरोफिला' है। यह नीम या बबूल की दातुन में बहुतायत से होता है। बबूल की दातुन करने से एक लाभ यह भी होता है कि उसका रस गले में जाने से बच्चों को सरदी, खाँसी आदि की बीमारी आसानी से नहीं हो पाती। (दातुन से दाँत साफ किए जाएँ या ब्रुश से अथवा और किसी से, आशय यह है कि नित्य ही दाँतों की सफाई की जानी चाहिए)। बच्चों को स्नान भी नित्य कराना चाहिए। ठंडे पानी के डर से स्नान न करने की तुलना में गरम पानी से भी नहा लेने में कोई हानि नहीं, परंतु यथासंभव ठंडे पानी से ही नहाने की आदत डालनी चाहिए। यह डर किसी ठोस आधार पर नहीं टिका है कि नित्य ठंडे पानी के स्नान से बच्चों को सरदी हो जाएगी। सरदी स्नान से नहीं होती, वरन शरीर के अन्य विकारों एवं पेट की बीमारी, कब्ज आदि से होती हैं।
5. **व्यायाम, आसन, प्राणायाम-** इसके बाद बच्चों के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए कि वे नित्य ही कुछ न कुछ, किसी न किसी प्रकार का व्यायाम अवश्य करें। घूमना, दौड़ना, दंड-बैठक, योगासन, प्राणायाम, सूर्य नमस्कार आदि में से अपनी सुविधा व इच्छानुकूल कोई भी व्यायाम चुना

जा सकता है। व्यायाम चाहे थोड़ा-सा ही हो, परंतु उसमें नियमितता व निरंतरता का ध्यान रखना चाहिए। वैसे सूर्य नमस्कार एक व्यायाम तो है ही, इसे सूर्य की उपासना भी माना गया है।

6. **नाश्ता-** इसके बाद बच्चों को नाश्ता देने की (यदि नाश्ता देना घर वाले अनिवार्य ही समझते हों तो) बारी आती है। नाश्ते में बिना तली, बिना मसाले की सुपाच्य चीजें दी जानी चाहिए। वैसे सबसे उत्तम नाश्ता ताजा दूध पिलाना ही होगा। उपासना के बाद नाश्ता की प्रथा डालना इस दृष्टि से उपयोगी रहेगी कि बच्चों में उपासना की आदत पक्की हो जाएगी व यह संस्कार भी पड़ेगा कि बिना भगवान की उपासना किए कुछ भी खाना-पीना अच्छा नहीं रहता।
7. **घर पर अभ्यास-** इसके बाद बच्चों को कम से कम एक-डेढ़ घंटा घर पर अभ्यास-अध्ययन करने के लिए अवश्य बैठाना चाहिए।
8. **शाला की तैयारी, भोजन एवं शाला-** इसके बाद शाला जाने की तैयारी बच्चे करें। वस्त्र उनके साफ हों, बाल सजे-सँवरे, नाखून कटे रहें, पूरी पुस्तकें व लेखन सामग्री साथ रहे; यह ध्यान में रखना चाहिए। फिर बच्चों का भोजन होगा। भोजन में बच्चों को पुष्टिकर भोजन पसंद करने के संस्कार डालने चाहिए। स्वादिष्ट भोजन स्वास्थ्य प्रधान हो न कि स्वाद प्रधान।
9. **संध्या के खेल -** बच्चों में यह आदत अवश्य डाली जाए कि वे संध्या समय कम से कम एक घंटा अवश्य ही मैदान के खेल खेलें। खेल अपने आप में एक व्यायाम भी है व इनसे सामूहिकता का भाव बढ़ता है व बच्चों में सामाजिक संबंध बनाए रखने की स्वस्थ आदतें बनती हैं।
10. **वाचनालय-पुस्तकालय -** बच्चों में यह संस्कार भी डाला जाना चाहिए कि वे नित्य ही अथवा नित्य संभव न हो सके



तो अधिकांशतः कम से कम 1 घंटा या आधा घंटा के लिए पुस्तकालयों-वाचनालयों में अवश्य जाएँ। वहाँ विभिन्न प्रकार की पत्र-पत्रिकाएँ देखें, पढ़ें व अपनी रुचि की बातें डायरी में नोट करें। यह विचार ठीक नहीं कि घरों पर ही ढेर सारी पत्र-पत्रिकाएँ मँगाई जाएँ और उन्हें पढ़ने के लिए दी जाएँ। घर पर आने वाला साहित्य तो पढ़ा ही जाएगा, पर पुस्तकालय-वाचनालय से ज्ञान क्षेत्र विस्तीर्ण होता है तथा हमें वैविध्य ज्ञान मिलता है।

- 11. शयन-** रात्रि को जल्दी ही अधिकाधिक 10 बजे तक बच्चों को सुला देना चाहिए। बच्चों को जल्दी सोने व जल्दी उठने के लाभ समझाए जाने चाहिए। सोते समय हाथ-मुँह साफ कर, घुटनों तक पैर धोकर सोएँ। सोते समय बिस्तर पर बच्चे फिर भगवान से इस तरह प्रार्थना करें कि प्रभु! तूने हमें जन्म दिया, आज का दिन हमें जीने को दिया, हमने आज अमुक-अमुक अच्छे या बुरे कार्य किए। बुरे कामों को तू क्षमा करना।

उक्त संहिता एक आदर्श के रूप में प्रस्तावित है। इसमें बच्चों की आयु, उनके शैक्षणिक स्तर, घर-परिवार की परिस्थिति, वातावरण आदि को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यक परिवर्तन किया जा सकता है। अधिक उपयुक्त तो यह होगा कि माता-पिता अपने बच्चों से इस संहिता पर विचार-विमर्श करें व सब मिल-बैठकर एक सर्वमान्य संहिता निर्धारित कर उसका पालन करने का निश्चय करें। ऐसे बच्चे स्वयं यह भाव रखेंगे कि यह संहिता उनके माता-पिता ने उनकी सहमति से उनके हित में ही बनाई है, अतः इसका पालन करना उनके लिए कल्याणकारी ही होगा।

- पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य





कहानी प्रथम दिवस



॥ अनुष्वधं भीम आबावृधेशवः ॥

जैसा अन्न खाते हैं, वैसा मन बनता है । सतो गुणी भोजन से ही मन की सात्विकता रहती है ।



हरी थी, मन भरी थी, मोतियों से जड़ी थी, राजाजी के बाग में दुशाला ओढ़े खड़ी थी ।

नानाजी का नुस्खा

नंदन दस वर्ष का बालक था । वह छठी कक्षा में पढ़ता था। यों नंदन प्रतिभाशाली था, पर परीक्षा में उसके उतने अंक नहीं आते थे, जितने कि आने चाहिए थे । कारण कि उसका स्वास्थ्य प्रायः खराब रहता था । बचपन से ही उसे अजीर्ण की बीमारी हो गई थी । उसका पेट प्रायः खराब रहता था । तरह-तरह की दवा की शीशियों से उसकी अलमारी भरी पड़ी थी, परंतु कोई दवा पूरी तरह असर ही न करती थी । कारण यह था कि नंदन बड़ा दुबला-पतला था । उसके साथी उसे ‘सींकिया पहलवान’ कहकर चिढ़ाया करते थे । अपने शरीर को देखकर नंदन का मन भी बड़ा खिन्न होता था, पर किया भी क्या जा सकता था । उसके माता- पिता हार मानकर चुप बैठ गए थे । उन्होंने नगर का कोई डॉक्टर- वैद्य भी न छोड़ा था । छुट्टियों में नंदन अपनी माँ के साथ ननिहाल गया ।

नंदन के नानाजी गर्मियों में हर बार हिमालय की गोद में बसे किसी तीर्थस्थान में जाते थे । उनका कहना था कि इस प्रकार मैदान की भीषण गर्मी से छुटकारा मिल जाता है । साथ ही साथ वर्ष में दो मास आध्यात्मिक प्रगति का, अपने आप के विषय में मनन- चिंतन का सुयोग भी प्राप्त हो जाता है । मात्र भौतिक उन्नति ही की जाए और आत्मिक प्रगति न की जाए तो व्यक्ति सदैव अपूर्ण और असंतुष्ट ही रहता है ।

इस वर्ष नंदन के नानाजी का देवप्रयाग जाने का कार्यक्रम था । ऋषिकेश से ७१ किलोमीटर की दूरी पर बसा यह उत्तराखंड का दर्शनीय स्थान है । भागीरथी और अलकानंदा के संगम पर बसा यह नगर स्वास्थ्यप्रद जलवायु और मोहक दृश्यों से युक्त है । नानाजी ने नंदन की माँ से आग्रह किया कि नंदन को लेकर वे भी उनके साथ चलें । संभव है कि पर्वत की शुद्ध

जलवायु के सेवन से नंदन के स्वास्थ्य में कुछ सुधार आ जाए। नंदन की माँ खुशी-खुशी तैयार हो गई। नंदन की प्रसन्नता की तो सीमा ही न थी। जब भी वह किसी पर्वतीय स्थान पर जाता तो प्रकृति के उस दिव्य सौंदर्य को देखकर उसका मन असीम आनंद से भर उठता था।

एक दिन नंदन, उसकी माँ और नानाजी सभी देवप्रयाग जा पहुँचे। वहाँ एक धर्मशाला में उनके रहने की सुविधापूर्ण व्यवस्था हो गई। नंदन यहाँ पहली बार आया था उसे यह बहुत अच्छा लग रहा था। यहाँ ऊँचे-ऊँचे मकान उसे बहुत पसंद आए जो भागीरथी और अलकनंदा के किनारे-किनारे ऊँची-नीची पहाड़ी पर बने हैं।

दूसरे ही दिन नानाजी ने घोषणा कर दी “ दो दिन रास्ते की थकान मिटा सकते हो। उसके बाद सभी को निश्चित कार्यक्रम के अनुसार नियमित और व्यवस्थित चलना होगा।

नंदन के लिए यह बात नई न थी। वह यह जानता था कि नानाजी का जीवन बड़ा अनुशासित है। वे जागना, खाना, सोना, घूमना आदि सभी समय से करते हैं। सुखी और स्वस्थ जीवन के लिए वे दिनचर्या का नियमित होना आवश्यक बतलाते थे। उसे उसमें किसी प्रकार की ऊब नहीं होती थी, वरन समय पर हर काम के होने से खुशी ही होती थी।

दूसरे ही दिन नंदन के नानाजी ने सभी के लिए दिनचर्या निर्धारित कर दी। नानाजी चार बजे उठते, नंदन और उसकी माँ पाँच बजे। पाँच बजे तक नहा-धोकर नानाजी पूजा करने बैठ जाते। वे मधुर स्वरों में गीता का पाठ करते तो नंदन की आँखें खुल जातीं। वह बिना माँ के कहे, आलस छोड़कर जल्दी उठ जाता। छः बजे तक नंदन और उसकी माँ भी नहा-धोकर तैयार हो जाते। तब तक नानाजी पूजा समाप्त कर चुकते, उस समय तक सूरज की किरणें चारों ओर फैल जाती थीं। नानाजी खुली जगह में स्वयं आसन प्राणायाम करते और नंदन को भी सिखाते। नंदन थक जाता तो बीच-बीच में रुक जाता। नानाजी आधा घंटे तक व्यायाम, आसन, प्राणायाम आदि करते रहते। इसके बाद घर आकर वे कुछ देर विश्राम करते और ठीक सात बजे सभी नाश्ता लेते। नाश्ता भी जो चाहे सो नहीं मिलता था। दूध, भीगी हुई अंकुरित दालें, उबले चने, भुनी हुई दाल, सोयाबीन, ताजे फल आदि में से ही नाश्ते में कुछ रहता। नाश्ते के बाद नानाजी नंदन को लेकर घूमने निकल जाते। वे आसपास धीरे-धीरे टहलते। नंदन को वे उस स्थान का, आसपास के व्यक्तियों और

वस्तुओं का परिचय देते जाते। आधा घंटे में वे घर लौट आते। घर आकर वे कुछ देर विश्राम करते फिर नानाजी अच्छा साहित्य पढ़ते। वे अध्ययन के बड़े शौकीन थे। जीवन निर्माण करने वाली, ज्ञानवर्द्धक अनेक पुस्तकें उनके पास थीं। वे कहा करते थे कि श्रेष्ठ पुस्तकें देव मूर्तियाँ हैं, उनकी उपासना करने से तत्काल ही फल मिलता है। वे हमें जीवन का सही मार्ग बताती हैं। कठिनाइयों में धैर्य बँधाती हैं, प्रेरणा, प्रकाश और उल्लास देती हैं। नानाजी ने नंदन के लिए भी बाल साहित्य की अनेकों सुंदर पुस्तक और पत्रिकाएँ खरीद दी थीं। वे जहाँ भी अच्छी पुस्तकें और पत्रिकाएँ देखते तो अवश्य खरीदते। नानाजी और नंदन दोनों ही एक घंटे पढ़ते। यदि कुछ समझ में न आता तो नंदन बीच-बीच में नानाजी से पूछता जाता। नानाजी को भी पढ़ते हुए जो बात अच्छी लगती, नंदन को समझाते जाते।

ग्यारह बजे सभी भोजन लेते। भोजन सुपाच्य, सात्विक और कम मसाले वाला होता। चपाती, चावल, सब्जी, दाल, दही, सलाद आदि ही भोजन में रहते। नानाजी कहते थे कि तले हुए, चटपटे, मावा और चीनी वाले गरिष्ठ पदार्थ पाचन शक्ति को बिगाड़ देते हैं। अपच ही सब रोगों की जड़ है, इसलिए आवश्यकता से अधिक खाना, तली चीजें खाना-इन दोनों बातों से बचना चाहिए। नंदन की आदत थी जल्दी-जल्दी ग्रास निगलने की पर नानाजी कहते थे कि चबा-चबाकर शांत और प्रसन्न मन से खाया गया भोजन ही लाभकारी होता है। वे नंदन में भी धीरे-धीरे चबा-चबाकर खाने की आदत डालकर ही माने।

खाने के बाद वे सभी विश्राम करते-सोते। दो बजे तक उठ जाते, फिर चाय पीते और गपशप करते। नंदन के नानाजी सेना में मेजर रह चुके थे। वे इतनी रोचक और ज्ञानवर्द्धक बातें करते कि दोनों माँ-बेटे सुधबुध खोकर उन्हें सुनते रहते। उन्हें विश्व के विविध देशों की, अपने देश के विविध स्थानों की और सैनिक जीवन की अनेक जानकारीयों थीं। नंदन ने संकल्प किया कि बड़ा होकर वह भी सैनिक बनेगा और मातृभूमि के लिए स्वयं को अर्पित कर देगा।

इस सब में शाम के आठ बज जाते। ४ से ५ बजे तक का समय पूरी तरह से नंदन के लिए था। नानाजी उसे पाठ्यक्रम से संबंधित पुस्तकें पढ़ाते। साथ ही वे नंदन को छोटी-छोटी कहानी, लेख, संस्मरण आदि लिखने के लिए प्रोत्साहित करते। नंदन जो लिखता उसमें वे संशोधन करते। कुछ को उन्होंने पत्र-पत्रिकाओं में भेज दिया था। पहली बार एक स्थानीय समाचार पत्र में नंदन की रचना छपी थी। नंदन उसे देखकर फूला न समाया था। यह सब

नानाजी की प्रेरणा प्रोत्साहन का ही फल था। नानाजी कहा करते थे कि संकल्प और लगन से किए कार्य में सदैव सफलता मिलती है। ४ से ५-३० तक सभी मिलकर खाना बनाते और खाते। कुछ धूप ढलने पर वे सभी घूमने निकल पड़ते। कभी ये देव प्रयाग के विविध मंदिर देखते, कभी अलकनंदा और भागीरथी के संगम की ओर निहारते तो कभी महात्माओं के प्रवचन सुनते। नंदन यद्यपि छोटा था, प्रवचन पूरी तरह से समझ नहीं पाता था, पर वह एकाग्र चित्त से उन्हें अधिक से अधिक समझने का प्रयास करता। वहाँ पर बैठना उसे बहुत अच्छा लगता। नानाजी प्रायः कहा करते थे कि भौतिक धन-संपत्ति से कभी आंतरिक सुख-शांति नहीं मिल सकती। जो आत्म-चिंतन, आत्म-मनन और आत्म-शोधन करते हैं वे ही आंतरिक सुख शांति पाते हैं।

रात्रि को आठ बजे तक सभी घर लौट आते। नंदन की माँ झटपट दूध गरम करती और दूध पीकर ९ बजे तक सभी सदस्य सो जाते।

इस प्रकार महीन बीत चला। नंदन नानाजी से बोला-
“यह समय तो पंख लगाकर उड़ गया, बिलकुल पता ही न लगा।
” नानाजी कहने लगे-“समय सदा तेजी से भागता है। बीता हुआ

समय कभी लौटकर नहीं आता। इसलिए समय का जो जितना सदुपयोग करते हैं, जीवन में वे उतने ही सफल होते हैं।

कुछ दिन बाद ही उनका वापिस लौटने का समय आ गया। नंदन का तो वहाँ से वापिस आने का मन ही नहीं कर रहा था। उसका मन तो उत्तुंग पर्वतमाला और कल-कल करती भागीरथी में ही रम गया था। दूसरे यहाँ आकर उसका स्वास्थ्य भी आश्चर्यजनक रूप से सुधर गया था। दवाओं से उसका पिट्ट छूट गया था। उसे आश्चर्य भी हो रहा था कि बिना दवाओं के वह कैसे ठीक हो गया। उसने अपनी यह शंका जब नानाजी के सामने रखी तो वे मुस्कराते हुए बोले-“नंदू ! यहाँ की स्वच्छ जलवायु, प्राकृतिक वातावरण स्वयं में अच्छी औषधि है। अधिकांश व्यक्ति सोचते हैं कि अच्छा स्वास्थ्य दवाओं से और मँहगा खाना खाने से बनता है, पर यह सब सोचना उनकी भूल ही है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए तीन महत्वपूर्ण सूत्र हैं- उन्नत विचार, शुद्ध भोजन और नियमित व्यायाम-विश्राम।

नंदन स्पष्ट रूप से नानाजी की बात न समझ सका। वह प्रश्नवाचक दृष्टि से उनकी ओर देखने लगा। नानाजी फिर समझाने



लगे-”काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, असंतोष आदि से मन को दूषित बनाना बीमार पड़ने का महत्वपूर्ण आंतरिक कारण है। अतएव मस्तिष्क को ऊँचे और आशावादी विचारों का अभ्यास कराओ। भोजन के लिए आवश्यक है कि समय पर ही भोजन करना। हमें जीने के लिए खाना चाहिए, जब कि मनोवृत्ति यह बनती जा रही है कि हम खाने के लिए जीते हैं। याद रखो! अच्छा स्वास्थ्य दवाओं और पैसे से नहीं खरीदा जा सकता। कीमती चीजें खाकर आरोग्य पाने की बात सोचना भी बेकार है। यह सुरक्षा तो निर्भर होती है- संयमित विचार, नियमित भोजन, व्यायाम और श्रम संतुलन पर जो इनमें समायोजन बनाए रखता है, वही अच्छे स्वास्थ्य का आनंद पाता है।

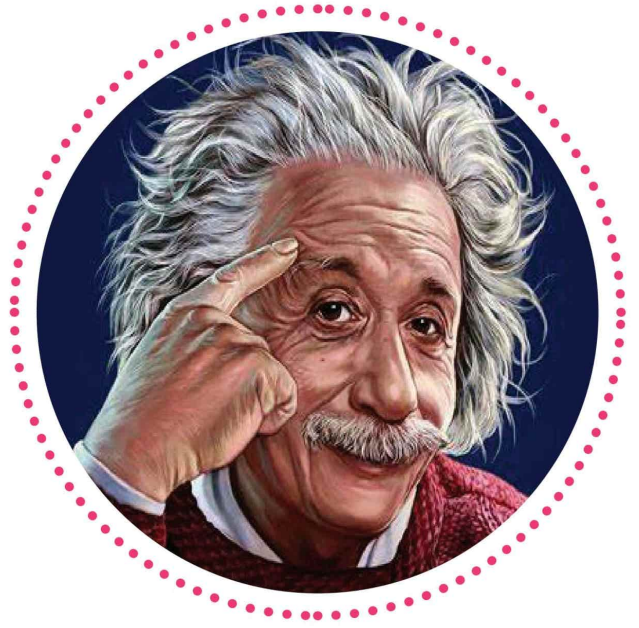
नानाजी की बातों ने नंदन को गहराई से प्रभावित किया। करता भी क्यों नहीं, वह स्वयं देख रहा था कि उनके निर्देशन के अनुसार चलकर उसने आरोग्य का आनंद पा लिया था। जो काम दवाओं से न हो सका, वह नानाजी के नुस्खे से पूरा हो गया था। उसने यह दृढ़ संकल्प किया था कि सदैव नानाजी की इन सभी शिक्षाओं का पालन करेगा। स्वास्थ्य की जो निधि उसने पाई है, उसकी सुरक्षा करेगा।

देव प्रयाग की गोद में खुशी-खुशी अपनी छुट्टियाँ बिताकर नंदन वापिस घर पहुँचा। स्कूल खुल गए थे। नंदन नए उत्साह से अपनी पढ़ाई में जुट गया। साथी उसके उत्साह और लाल-लाल गालों को देखकर हैरान थे। मरियल- सा रहने वाला नंदन अब हर कार्य में उल्लास से भाग लेता। मित्र पूछते थे- ”नंदन! तुमने छुट्टियों में क्या खाया है?”

नंदन हँसकर कहता- ‘नानाजी का नुस्खा।’

नंदन अभी भी नानाजी की शिक्षाओं का पूरी तरह पालन करता है। वह मन को प्रसन्न रखता है, अच्छी बातें सोचता है। वह प्रातःकाल जल्दी उठकर नियमित रूप से व्यायाम करता है और खेलों में रुचिपूर्वक भाग लेता है। भोजन में तो यह अत्यधिक सावधानी बरतता है। बाजार की चटपटी चीजें देखकर उसे नानाजी की बात याद आ जाती है-”खाने से पहले सोचो कि क्या इसकी तुम्हारे लिए आवश्यकता है? पेट को कूड़ेदान मत बनाओ कि जो हाथ पड़ा वही अंदर डाल दिया।”

अब नंदन न केवल अपनी पढ़ाई में अपितु स्कूल के अन्य कार्यक्रमों में भी सबसे आगे रहता है। घर के कामों में भी वह माँ का हाथ बँटाता है। उसके अध्यापक और अभिभावक दोनों ही उससे प्रसन्न रहते हैं।



अल्बर्ट आइंस्टीन

“ सफल व्यक्ति बनने की नहीं, मूल्यवान व्यक्ति बनने की कोशिश करें।”

“अगर हमें पता होता कि हम क्या कर रहे हैं, तो इसे शोध नहीं कहा जाता, है ना?”

“मेरे पास कोई खास प्रतिभा नहीं है। मैं केवल उत्साही जिज्ञासु हूँ।”



पहेली का उत्तर – भुट्टा



कहानी द्वितीय दिवस



॥ बियात विश्व मत्रिणम् ॥ -ऋग० १ । ८६ । १०
चटोरे लोग बेमौत मरते हैं । स्वाद के लिए नहीं, स्वास्थ्य के लिए खाओ ।



कटोरे में कटोरा, बेटा बाप से ज्यादा गोरा ।

चटोरा रंजन

रंजन अपने माता-पिता का इकलौता बेटा था । उससे बड़ी चार बहिनें थीं । बड़ी मनौतियों के बाद वह पैदा हुआ था । इसलिए माता-पिता ने बचपन से ही उसे बहुत लाड़-प्यार दिया था । रंजन के मुँह से बात निकलने की देर न होती और वे उसे पूरा करने में लग जाते । रंजन के कारण उसकी बहिनों को भी काफी डाँट खानी पड़ती । बचपन से ही यह देख-सुनकर रंजन बड़ा उदंड हो गया । वह अपनी जिद के आगे किसी की एक न सुनता । माता-पिता सोचते कि अभी तो बच्चा है, बड़ा होकर अपने आप सुधर ही जाएगा, परंतु वे यह भूल जाते थे कि बाल्यावस्था ही बालक के निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण समय है । इस समय को वे जो भी कुछ सिखाएँगे तो वही संस्कार, वही आदतें आगे के जीवन में विकसित होंगी ।

कुछ बड़े होने पर रंजन स्कूल जाने लगा । उसका मन पढ़ाई में कम लगता था तथा खेलकूद और शरारत में अधिक । वहाँ पक्षपात करने वाले माता-पिता तो थे नहीं । गलत काम करने पर रंजन के अध्यापक उसे डाँटते । रंजन उनसे तो कुछ न कह पाता था, परंतु वह अपने साथियों को तंग करता । जो बच्चे पढ़ाई में अच्छे थे उन्हें अध्यापक प्यार करते थे, परंतु रंजन उनसे चिढ़ता था और किसी न किसी प्रकार उन्हें तंग करता रहता था । इसका परिणाम यह हुआ कि अच्छे बच्चे रंजन से कतराने लगे । पढ़ने में कमजोर, कामचोर, शरारती और उदंड बच्चे ही रंजन के दोस्त थे ।

संगत का असर बहुत ही जल्दी पड़ता है । बच्चा तो अपने भले-बुरे साथियों की पहिचान कर नहीं पाता । यही कारण है कि समझदार अभिभावक सदैव यह ध्यान रखते हैं कि उनका बालक कहीं बुरी संगति में तो नहीं पड़ गया । जो ऐसा नहीं करते वे

अंत में पछताते हैं। रंजन के माता-पिता ने उसे पढ़ाने के लिए घर पर एक अध्यापक रख दिया था। बस इससे अधिक उन्हें उसकी पढ़ाई-लिखाई या स्कूल के काम से कोई मतलब ही न था वे तो सोचते थे कि घर पर अलग से शिक्षक रखकर वे अपने बेटे को बहुत अच्छी तरह पढ़ा रहे हैं। जबकि माता-पिता को बालक के व्यवहार, चरित्र पर स्वयं अच्छी तरह ध्यान देना चाहिए।

रंजन स्कूल में तो जैसे तैसे कक्षाएँ उत्तीर्ण करके आगे बढ़ता गया, परंतु अपने साथियों में रहकर उसने बहुत-से दुर्गुण अपना लिए। रंजन के साथियों को पता था कि माता-पिता उसकी हर जिद पूरी करेंगे। अतएव वे उसे घर से अधिक से अधिक पैसे लाने के लिए उकसाते, रंजन के पैसे सभी मिल-जुलकर चाट खाते थे। रंजन में चटोरेपन की आदत पड़ गई। पिताजी यदि कभी उसे कम पैसे देते तो वह माँ के पर्स से चुरा लाता।

रंजन को घर का खाना अच्छा नहीं लगता था। घर पर भी वह बाजार की चीजें खाने की जिद करता रहता, माँ यदि उसकी मनपसंद चीजें नहीं मँगाती तो वह जिद करके भूखा ही सो जाता। यह देखकर उनका मन दुःखी होता और रंजन जो कहता वह मँगा देती। वे सोचती कि कुछ न खाने से अच्छा यही है कि बच्चा अपनी मनचाही चीज ही थोड़ी खा ले, पर वे यही भूल कर गई, क्योंकि शरीर के लिए न खाना उतना हानिकर नहीं है जितना कि उल्टी-सीधी चीजों को खाना। भोजन भी ऐसा होना चाहिए जो हमारे स्वास्थ्य को बढ़ाए।

रंजन के चटोरेपन का परिणाम भी जल्दी ही सामने आ गया। उसका जिगर बढ़ गया और सूखे की बीमारी हो गई जब डाक्टरों ने घर पर इलाज न होने से जवाब दे दिया तो उसे अस्पताल में ही दाखिल करना पड़ा। डाक्टरों द्वारा बहुत कोशिश करने पर उसकी वह बीमारी काबू में आई, जैसे ही वह ठीक हुआ तो फिर चाट-पकौड़े और पकवान खाने की जिद करने लगा, परंतु रंजन की माँ को डाक्टरों ने अच्छी तरह समझा दिया था कि रंजन की बीमारी का कारण उसका चटोरापन ही है। यदि अब वे उससे परहेज न कराएँगी तो फिर वह कभी ठीक नहीं हो पाएगा। अब रंजन की माँ को अपनी गलती का पता हो गया था। उन्होंने बाहर की चीजें खाने पर कठोरता और सख्ती से प्रतिबंध लगा दिया, अपनी बात पूरी न होते देख रंजन की जिद भी कम हो गई। अब वह जल्दी ही ठीक होने लगा।

अस्पताल में रंजन के पलंग के बराबर में ही उसका ही हम उम्र का एक बालक था। रंजन की भाँति वह भी बहुत चटोरा था। रंजन देखता था कि जैसे ही वह अकेला रह जाता था तो मनमानी चीजें खाता। रंजन उसे मना करता तो कहता- “डाक्टरों की क्या है, ये तो ऐसे ही कहते रहते हैं। हम तो जो मन में आएगा वह खाएँगे और क्या है, मर ही तो जाएँगे।” रंजन को उसने सख्त मना कर दिया था कि उसके अभिभावकों से इस विषय में वह कुछ न कहे। रंजन को भी उनसे यह कहना अच्छा न लगा। कभी-कभी उसका भी मन होता कि वह भी मिर्च-मसालेदार चीजें खाए पर उसकी निगरानी के लिए कोई न कोई बैठा ही रहता, रंजन मन



मसोसकर रह जाता। कभी-कभी उसे अपने घर वालों पर गुस्सा भी आता कि क्यों हर समय उसे घेरे बैठे रहते हैं, पर वह कह भी क्या सकता था ?

लेकिन जल्दी ही रंजन की समझ में इसका कारण आ गया। कुछ ही दिनों में उसका साथी प्रबोध बुरी तरह बीमार पड़ गया। बदपरहेजी से उसका पीलिया बहुत बिगड़ गया था। उस पर बेहोशी छा गई। उसके माता-पिता घबरा ही उठे। पहले तो डाक्टरों की समझ में न आया कि ठीक होते-होते वह बीमार कैसे पड़ गया, पर जब उसकी बदपरहेजी की बात पता लगी तो उन्होंने उसके माता-पिता को खूब डाँटा। वे डाक्टरों के सामने यह गिड़गिड़ा रहे थे- “डाक्टर साहब ! माफ कीजिए, गलती हुई। अब की बार हमारे बच्चे को बचा लीजिए।”

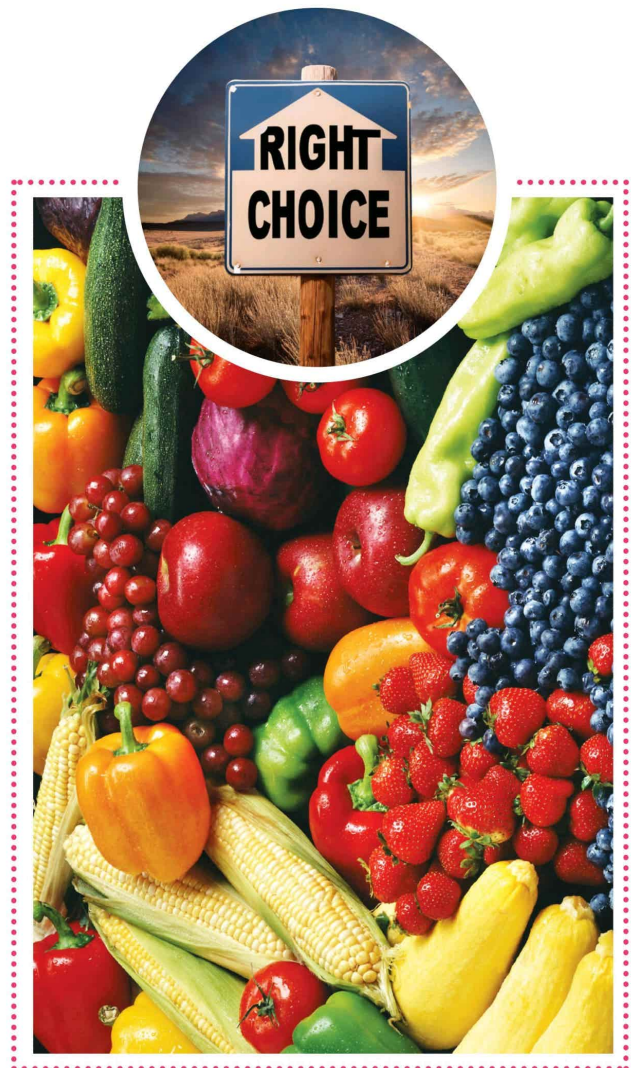
प्रबोध के कई दिनों तक ग्लूकोज चढ़ाया गया, अनेक इन्जेक्शन लगाए गए तब जाकर उसे कुछ होश आया। रंजन की माँ ने उसे दिखाते हुए कहा- “देख लिया रंजन बदपरहेजी का परिणाम। यदि तली-भुनी, मिर्च-मसाले वाली चीजें, चाट-पकौड़े अधिक न खाओ तो बीमार ही क्यों पड़ो और क्यों अस्पताल आना पड़े। जो भी अपनी जीभ पर काबू नहीं रखेगा तो वह सदैव बीमार रहेगा और दुःख भुगतेगा।”



प्रबोध की गंभीर स्थिति का रंजन के मन पर गहराई से प्रभाव पड़ा था। उसने तभी सोच लिया था कि अब वह माँ के कहने के अनुसार खाएगा। रंजन जब ठीक होकर घर आया तो उसकी माँ उसके खाने का विशेष ध्यान रखती। तली-भुनी, गरिष्ठ तेज मिर्च-मसाले वाली चीजें अब वह घर में किसी को भी नहीं खाने देतीं। दूसरों को भी वे यही कहती हैं कि ऐसी चीजें खाने से पेट खराब होता है, रक्त विषैला बनता है और व्यक्ति बीमारियों के चंगुल में फँसता है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए सादा और संतुलित भोजन अति आवश्यक है।



पहेली का उत्तर – नारियल





कहानी तृतीय दिवस



॥ अन्नं न विन्द्यात् तद्व्रतम् ॥ -तैत्तिरीय० ३ । ७
अन्न का तिरस्कार न करो, वह पूजनीय है । जूठन छोड़कर अन्न भगवान का तिरस्कार न करो ।



ऐसा क्या है जो खरीदने पर काला, जलने पर लाल, और फेंकने पर सफेद हो जाता है ।

चटोरे भोजन भट्ट

भागवंती नाम की एक चुहिया थी । उसके दो बच्चे थे- चुनचुन और मुनमुन । भागवंती अपने बच्चों को बहुत प्यार करती थी । बच्चे थे भी बड़े योग्य । वे दोनों सुबह जल्दी उठ जाते, मन लगाकर शिक्षा लेते, माता-पिता और बड़ों का कहना मानते ।

कुछ दिनों से चुनचुन - मुनमुन पड़ोस के बुरे बच्चों के साथ रहने लगे थे । उनमें एक गंदी आदत आ गई थी, वह थी चटोरेपन की । धीरे-धीरे वह आदत बढ़ती ही गई । दोनों को घर का खाना बिलकुल भी न भाता । माँ जो कुछ खाने को देती, उनमें थोड़ा-बहुत मुँह मारते और फिर इधर-उधर फेंक आते । माँ के डर से ही वे ऐसा करते थे । एक-दो बार भागवंती ने उनका काम देखकर डाँटा भी था ।

चुनचुन और मुनमुन का स्वास्थ्य पहले बहुत अच्छा था । मोटा गोल-मटोल सा शरीर, दमकती काली आँखें । स्वस्थ

होने के कारण वे सुंदर भी बहुत लगते थे । सुंदरता का सबसे बड़ा रहस्य अच्छा स्वास्थ्य ही है । उनके गोल-मोल शरीर को देखकर कई बार पूसी मौसी भी उन पर ताक लगा चुकी थी । पर हर बार उन्हें निराश ही होना पड़ा था, क्योंकि चुनचुन मुनमुन बड़े ही फुरतीले थे । उन्हें पकड़ पाना सरल न था । खतरे का आभास भर होने पर वे बिजली की भाँति दौड़ जाते थे । पूसी मौसी को होठों पर जीभ फिराकर ही रह जाना पड़ता था ।

पर धीरे-धीरे चुनचुन - मुनमुन दुबले होने लगे । भागवंती यह देखकर बड़ी चिंतित हुई । बच्चों के दुबले होने का कारण उसकी समझ में न आया, वह तो पहले की ही भाँति उनके लिए पौष्टिक चीजें लाती थी । फल, मक्खन, बिस्कुट, रोटी आदि । भागवंती ने बच्चों पर निगाह रखनी शुरू कर दी । जल्दी ही उनके दुबले होने का कारण उसकी समझ में आ गया । वे घर का खाना



तो छूते भर थे। वे दोनों चाट-पकौड़ी और मिठाई की दुकानों पर पहुँच जाते और वहाँ जी भरकर खाते।

भागवती ने अपने बच्चों को बहुत समझाया। कहा- “बच्चो! तुम

जैसा खाना खाओगे वैसा ही तुम्हारा शरीर

बनेगा। देखो मिठाई और

चाट-पकौड़े कभी-कभी खाना ही ठीक रहता है। इन्हें रोज-रोज खाने से तुम्हारा स्वास्थ्य बहुत ही खराब हो जाएगा। तुम बीमार पड़ जाओगे। तुम नहीं जानते कि ये चीजें ही खाकर तुम दिन पर दिन कितने दुबले होते जा रहे हो।”

“अब नहीं खाएँगे माँ!” दोनों बच्चे माँ से कहते, पर जैसे ही वे घर से बाहर निकलते थे, उनके मुँह में पानी भर आता। पैर अचानक ही उधर बढ़ जाते। मिठाई चाट को देखकर उनके मुँह में लार निकलने लगती।

“न भैया न! हम नहीं खाएँगे खराब चीजें। माँ ने मना

किया न।” चुनचुन ने कहा। “सुन,

जो बस आज ही खा लेते हैं। कल से फिर नहीं खाएँगे। इधर आएँगे भी नहीं।” मुनमुन कहता और दोनों एकदूसरे का हाथ पकड़कर उधर ही बढ़ जाते।

रोज-रोज ऐसा ही होता। उनका कल कभी आता ही न था। वे बस “कल” पर बात टालकर रह जाते थे। जो उसी समय काम नहीं करते, “कल-कल” करते हैं, वे हमेशा बेअक्ल ही रहते हैं। उनका सोचा कभी पूरा होता ही नहीं। आलसी और अविवेकी ही “आज नहीं कल” ऐसा सोचते हैं।



एक बार किसी त्योहार का अवसर था। कई दिनों पहले से दुकानों पर स्वादिष्ट चीजें बननी शुरू हो गई थीं। चुनचुन-मुनमुन की खूब बन आई। वे सबकी आँख बचाकर छककर खाते। चार-पाँच दिनों तक वे ऐसा ही करते रहे। उनके पेट खराब हो गए पर दोनों ने खाने का मोह न छोड़ा। स्वाद-स्वाद में दोनों खूब खा जाते यहाँ तक कि उनके लिए चलना भी कठिन हो जाता, धीरे-धीरे वे घर पहुँचते।



एक दिन जब वे टहलते हुए जा रहे थे कि पूसी मौसी ने उन्हें देख लिया। “आज नहीं बच पाओगे बच्चू।” मन ही मन उसने कहा और पीछे से चुपचाप चुनचुन की पूँछ पकड़ ली। चुनचुन घबराकर तेजी से भागा और सँकरी नाली में जाकर छिप गया। उसका दिल जोरों से धड़क रहा था। आज वह पूसी

मौसी के मुँह में जाने से बाल-बाल बचा था।

काफी देर बाद चुनचुन-मुनमुन दोनों नाली से निकले, पर यह क्या चुनचुन की पूँछ ही गायब थी। अपनी कटी हुई पूँछ देखकर चुनचुन बहुत ही रोया।

अब दोनों के पेट में दर्द भी होना शुरू हो गया था। जैसे-तैसे वे घर पहुँचे। उनके पेट का दर्द बढ़ता ही जा रहा था। रातभर वे दोनों दर्द से कराहते रहे। भागवती बेचारी दर्द का कारण समझ ही न पा रही थी। वह दर्द कम करने के लिए कभी कोई उपाय करती तो कभी कोई पर इन सबके बाद किसी से कोई लाभ ही न हो रहा था।

सुबह होने पर भागवती दौड़ी-दौड़ी गई और पड़ोस की बूढ़ी किस्सो चुहिया को बुला लाई। बच्चों को दिखाते हुए वह बोली- “ताई! तुम तो बड़ी अनुभवी हो, बच्चों को बचा लो। मुझे लगता है ये मरासू रखे हैं।”

किस्सो ने चुनचुन - मुनमुन के पेट जोर-जोर से दबा-दबाकर देखे। अपना सिर हिलाते हुए वह बोली - “भागो कोई खास बात नहीं है। तेरे बच्चे ज्यादा खा गए हैं। इसीलिए पेट में दर्द हुआ है। पर हाँ री! इनकी



आँतें भी बड़ी कमजोर हो गईं लगती हैं। इन्हें महीने भर तक इधर-उधर की चीजें न खाने देना, नहीं तो सचमुच ही ये मर जाएँगे।”

भागवती ने दिन-रात बच्चों पर कड़ी निगरानी रखनी शुरू कर दी। उनका बिल से बाहर निकलना भी बंद कर दिया। वह उन्हें बहुत ही परहेज का रूखा-सूखा भोजन देती थी। फिर भी जब-तब उनके पेट में दरद होने लगता था।

अब चुनचुन मुनमुन की समझ में अपनी गलती आ गई थी। ठीक होने पर फिर कभी उन्होंने चाट-मिठाई की दुकान की ओर मुँह भी नहीं किया। अब वे दूसरे बच्चों को भी अधिक चाट-मिठाई खाते देखते तो मुनमुन कहता - “न भाई न! अधिक न खाना इन्हें, नहीं तो बीमार पड़ जाओगे।”

“भाई! यदि खराब चीजें खाओगे तो हमेशा के लिए अपना स्वास्थ्य गँवा बैठोगे। स्वास्थ्य खराब होने पर फिर जीवन भार हो जाता है, इसलिए जीभ पर काबू रखो। जो भी खाओ सोच-समझकर खाओ। अच्छा स्वास्थ्य और अच्छी समझ जीवन की यह दो बहुत बड़ी संपत्तियाँ हैं। “ चुनचुन भी अपना सिर हिलाकर उसकी बात का समर्थन किया करता था।



पहेली का उत्तर – कोयला



कहानी चतुर्थ दिवस



पिपेशनाकंस्तृभिर्दनुनाः । -ऋग० १ । ६८ । १०
संयमी मनुष्य स्वर्ग को भी जीत लेता है । शक्तिसंचय का मूल स्रोत संयम है ।



बताओ जरा, गोल है पर गेंद नहीं, पूँछ है पर पशु नहीं ।
(संकेत- बच्चे उसकी पुंछ को पकड़ कर हँसते-खेलते और खिलखिलाते हैं)

बीमारियों की जड़

एक बार भास्कर नाम का एक सिंह और उसकी पत्नी रानी घूमते-घूमते अपनी गुफा से बहुत दूर निकल गए । बातों ही बातों में उन्हें रास्ते का कुछ पता ही न रहा और वे नदी के पार बसे हुए दंडकारण्य वन में जा पहुँचे । रानी को यह वन बहुत अधिक पसंद आया । चारों ओर पहाड़ियाँ उनकी गोद में फैली हरियाली, कल-कल, छल-छल करके बहती नदी सभी ने उसके मन को मोह लिया । सिंहनी ने अपने पति को स्पष्ट निर्णय सुना दिया ‘आज से हम दंडकारण्य में ही रहेंगे ।’

भास्कर ने भी इसका विरोध न किया । उसे स्वयं भी देशाटन अच्छा लगता था । वह सदैव यही कहता था कि स्थान-स्थान पर घूमने से बहुत अधिक ज्ञान बढ़ता है । दूसरे भास्कर का स्वभाव भी बहुत अच्छा था । वह जहाँ भी जाता था, जल्दी ही वहाँ के प्राणियों में घुलमिल जाता था । यही नहीं विनयशीलता,

परोपकार, अनुशासन, सत्यवादिता, सच्चरित्रता आदि गुणों के कारण ही वह बहुत लोकप्रिय हो जाता था ।

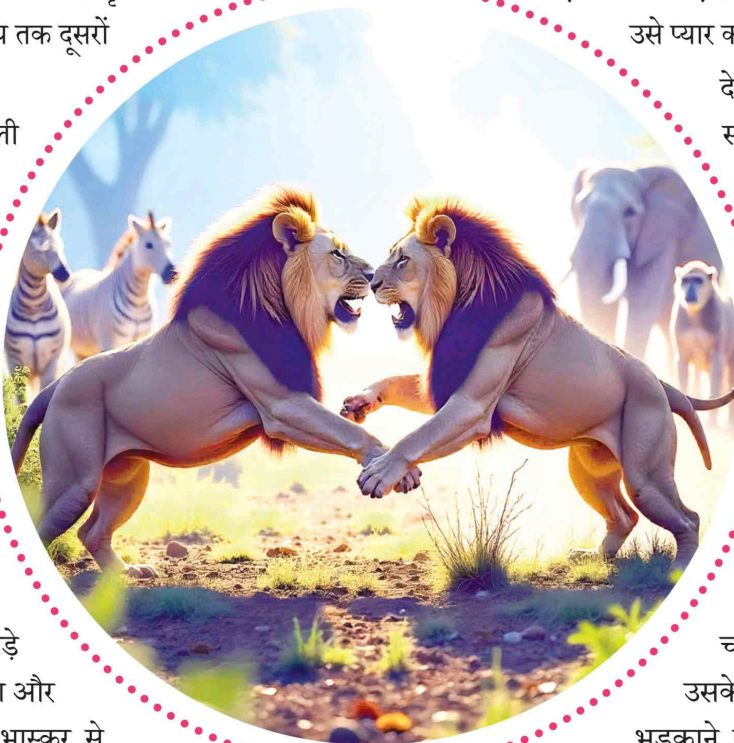
भास्कर के गुणों के कारण दंडकारण्य के जीव-जंतु भी थोड़े ही दिनों में उसे बहुत चाहने लगे । संयोग की बात कि कुछ ही दिनों बाद दंडकारण्य का राजा मर गया । कौन राजा हो ? इस विषय को लेकर सभी प्राणी चिंतित हो उठे । चिंता की बात भी थी । अयोग्य और अत्याचारी शासक अपनी बुद्धिहीनता से, स्वार्थपरता से प्रजा का शोषण करता रहता है, ऐसे राजा से तो राजा के बिना रहना ही अच्छा ।

दंडकारण्य के प्राणियों ने बड़े सोच-विचार कर भास्कर को अपना राजा चुना, पर विजयेंद्र नाम के एक सिंह को यह अच्छा न लगा । वह मन ही मन सोच रहा था कि उसे ही राजा चुना जाएगा । वह अपना विरोध प्रकट करते हुए बोला- एक

अपरिचित पर आप कैसे विश्वास कर रहे हैं। शुरू में तो सभी अच्छे दीखते हैं, पर बाद में ही उनके दोष दिखाई देते हैं। राजा चुनना चाहिए उसे जो प्रारंभ से ही हमारे बीच रहा हो, जिसे हम शुरू से ही अच्छी तरह जानते हों। पर विजयेंद्र की इस बात का किसी ने कोई समर्थन न किया। चेता लोमड़ी बोली- भास्कर दादा अब हमारे लिए अपरिचित भी कहाँ हैं ? उन्हें हमारे साथ रहते-रहते पूरे आठ महीने बीत चुके हैं। किसी व्यक्ति को जानने के लिए इतना समय क्या कम होता है ? राजा भालू बोला- कौन कैसा है ? इसकी परख बुद्धिमान थोड़े ही समय में कर लिया करते हैं। कोई भी अपने स्वभाव को बहुत दिनों तक छिपा नहीं सकता। कृत्रिमता और आडंबर कुछ ही समय तक दूसरों को धोखे में डालते हैं।

पद्मा हथिनी बोली
— योग्यता और गुणों के आधार पर राजा का चुनाव होना चाहिए, न कि अपने-पराए की संकुचित मनोवृत्ति के आधार पर। भास्कर आखिर सर्वसम्मति से दंडकारण्य का राजा चुन ही लिया गया। विजयेंद्र अपना सा मुँह लेकर रह गया। उसने बड़े अपमान का अनुभव किया और मन ही मन प्रतिज्ञा की भास्कर से इसका बदला लेकर ही रहेगा।

अब विजयेंद्र भास्कर से बदला लेने का कोई मौका ढूँढ़ता ही रहता। वह हर जगह उसकी बुराई करता, जानवरों को भड़काता। भास्कर को पदच्युत करने के लिए विजयेंद्र ने अनेक षडयंत्र रचे। वह बस इसी बात को लेकर सोचता, घुलता और कुढ़ता रहता कि किसी भी प्रकार भास्कर को अपमानित करे। इसके लिए वह नई-नई योजनाएँ बनाता, जंगल के प्राणियों को अपनी ओर मिलाने की कोशिश करता। दूसरों के बहकावे में आकर गलत को भी सही कहने वालों की कहीं भी कमी नहीं होती। विजयेंद्र ने भी जंगल के कुछ मूर्ख प्राणियों को अपनी ओर मिला लिया। वे सभी मिलकर भास्कर के विरुद्ध षडयंत्र रचते।



इधर भास्कर ने अपने गुणों से प्रजा का मन जीत लिया था। दुर्जन ऊँचा पद पाकर अहं से भर उठते हैं, अपनी शक्ति का प्रयोग दूसरों को पीड़ित करने में करते हैं इसके विपरीत महान् व्यक्ति ऊँचा पद पाकर और अधिक विनम्र बन जाते हैं तथा अपनी शक्ति का उपयोग दूसरों की सहायता और उपकार में करते हैं। भास्कर भी ऊँचा पद पाकर और अधिक विनम्र और परोपकारी बन गया था। प्रजा की भलाई सोचने और करने में वह हर समय अपने आपको जुटाए रखता था, अपने पद और अधिकार का प्रयोग उसने कभी भी व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं किया था।

ऐसा शासक बड़े सौभाग्य से मिलता है फिर भला प्रजा उसे प्यार क्यों न करती ?

देर या सबेर एक न एक दिन तो सचाई आखिर सामने आती ही है। विजयेंद्र के षडयंत्रों का जल्दी ही भंडाफोड हो गया। उसकी करतूतों को जानकर जानवर बड़े क्रुद्ध हुए और उसे मारने के लिए उस पर टूट पड़े। भास्कर ने बीच-बचाव करके बड़ी मुश्किल से उसे बचाया अन्यथा उस दिन तो विजयेंद्र के प्राण ही निकल गए होते। विजयेंद्र की चापलूसी करने वाले, हर समय उसके आगे-पीछे हिलने वाले, उसे भडकाने वाले साथियों का पता तक न

था जिनका कोई सिद्धांत नहीं होता, आदर्श नहीं होता ऐसे चापलूस तभी तक आगे-पीछे घूमते हैं जब तक उनका अहं या स्वार्थ पूरा होता है। वे व्यक्ति को नहीं पद को प्यार करते हैं। व्यक्ति के अधिकार हीन होते ही वे ऐसे मुँह फिरा लेते हैं जैसे वे उसे जानते ही न हों।

भास्कर बहुतेरा न न करता रह गया, पर जंगल के सभी जानवरों ने सर्वसम्मति में विजयेंद्र के देश निकालने का प्रस्ताव पारित कर दिया। लाचार होकर विजयेंद्र को एक दिन अपनी पत्नी के साथ दंडकारण्य से निकलना ही पड़ा।

विजयेंद्र ने पास के ही एक वन में शरण ली। वह अब भी अपनी गलती मानने को तैयार न था। अभी भी यही कहता



रहता आखिर मैं किस बात से उस भास्कर के बच्चे से कम हूँ?’ ईर्ष्या और द्वेष की भावनाओं से भरा विजयेंद्र हर समय कुढ़ता और जलता रहता। उसकी पत्नी उसे समझाती ‘देखो जी’ जो हुआ उसे भूल जाओ। यो हर समय सोचते रहने से तो तुम बीमार पड़ जाओगे।’ पत्नी को भी विजयेंद्र डाँटकर चुप कर देता उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो गया था, वह हर समय झल्लाता रहता। फल यह हुआ कि जंगल का कोई जानवर उससे बात न करता। चिड़चिड़े और बात-बात में झल्लाने वाले, दूसरों से ठीक से बात न करने वाले के पास आखिर बैठता ही कौन है ?

मन की भावनाएं शरीर पर बड़ा गहरा प्रभाव डालती है। मन के विकार बड़े घातक होते हैं तथा अनेक शारीरिक बीमारियाँ उत्पन्न कर देते हैं। ईर्ष्या, द्वेष, छल-कपट, मोह, काम-क्रोध आदि विनाश करने वाले घातक रोग हैं। तन के रोगों को तो देखा जा सकता है, पर ये ऐसे भयंकर होते हैं कि अंदर ही अंदर छिपकर जड़ जमाकर बैठ जाते हैं और धीरे-धीरे सर्वनाश कर डालते हैं मन के रोगों के जाल में विजयेंद्र भी ऐसा उलझा कि धीरे-धीरे शैय्या से लग गया। उसके लिए उठना-बैठना भी दूभर हो गया। पत्नी शिकार करके ला देती तो वह थोड़ा-बहुत जैसे-तैसे खा लेता।

विजयेंद्र की ऐसी गंभीर स्थिति देखकर उसकी पत्नी का मन पीड़ा से कराह उठा उससे आखिर रहा न गया और चुपचाप राजवैद्य देवदत्त सिंह के यहाँ दौड़ी गई दुःख की अधिकता से उससे कुछ बोला न जा रहा था। उसकी आँखों से निरंतर आँसू बह रहे थे। विजयेंद्र की पत्नी ने देवदत्त के पैर पकड़ लिए और इतना ही कह पाई वैद्यजी, दया कीजिए मेरे पति को बचा लीजिए।

उसकी करुण स्थिति देखकर वैद्यजी का मन भी पिघल गया। बैठो बहिन, धैर्य करो, कहकर उन्होंने आँसू पोछे।

क्या हुआ है तुम्हारे पति को ? वैद्यजी ने पूछा। विजयेंद्र की पत्नी ने निस्संकोच दंडकारण्य से लेकर अब तक की सभी घटनाएँ और स्थितियाँ कह सुनाई वैद्यजी बड़े ध्यान से सारी बातें सुनकर बोले-ओह, तुम्हारे पति को प्रमुख रूप से मन के रोग हैं। हमारे मन में भी अनेक रोग छिपे रहते हैं, पर जब हम इनसे लापरवाह रहते हैं, इन्हें पनपने देते हैं तो हमारे विकास को रोक देते हैं, जीवन को कलह और दुःख से भर देते हैं। मन के रोग ईर्ष्या-क्रोध आदि शरीर के रोगों से भी अधिक भयानक होते हैं। यही हमारे असली

दुश्मन होते हैं। मन के ये रोग अनेक प्रकार के शारीरिक रोगों को जन्म देते हैं, ये शरीर को बीमारियों का घर बना डालते हैं इसलिए बुद्धिमान इनसे सदैव बचते हैं।

फिर कुछ देर रुककर कुछ सोचते हुए देवदत्त बोले- बहिन, तुम मेरे पास देर करके आई हो, फिर भी तुम्हारे साथ चलता हूँ शायद कुछ हो सके।’

वैद्य देवदत्त ने विजयेंद्र की पूरी तरह जाँच की। ईर्ष्या, द्वेष, कुढ़न आदि मानसिक बीमारियों ने उसका शरीर पूरी तरह से घुला दिया था। वह हड्डियों का ढाँचा मात्र रह गया था। उसका चेहरा भी बड़ा भयंकर सा लग रहा था। सच है, जैसे हमारे मन के भाव होते हैं मुख की आकृति भी वैसी ही बन जाया करती है। हमारा मुख वह शीशा है जिसमें बुद्धिमान व्यक्ति हमारे मन के विचारों को पढ़ लेते हैं। देवदत्त ने विजयेंद्र को समझाया- बच्चे अपने आप को सँभालो, अपने मन पर संयम रखो। अपनी अच्छी या बुरी स्थिति के लिए हम स्वयं उत्तरदायी हैं। क्यों अपने आपको बरबाद करते हो ? अपने मन को स्वस्थ बनाओ, प्रसन्न बनाओ, निर्मल बनाओ। तब तुम देखोगे कि तुम्हारी शारीरिक बीमारियाँ भी कितनी जल्दी भाग जाती हैं।

विजयेंद्र को वैद्यजी की बातें बिलकुल भी अच्छी न लगीं। उसने उपेक्षा से मुँह फिरा लिया, उन्होंने भी कुछ कहना ठीक नहीं समझा। दूसरों की बात को कोई महत्त्व न देने वाले दुराग्रही से अधिक कुछ कहने-सुनने से लाभ भी क्या ?

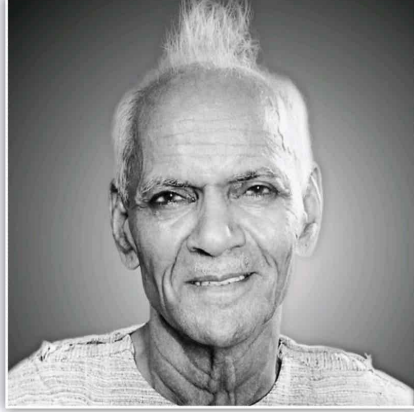
वैद्यजी के चले जाने पर विजयेंद्र ने अपनी पत्नी को बहुत डाँटा कि वह क्यों उन्हें बुलाकर लाई, उसने उनकी बताई कोई दवा भी नहीं ली। यों ही घुलते-घुलते एक दिन विजयेंद्र आखिर मर गया। उसकी पत्नी फूट-फूटकर रो उठी। वह बार-बार यही सोच रही थी कि मन के विकारों ने मेरे पति को घुला घुलाकर मार डाला। एक साथ मर जाना उतना कष्ट देने वाला नहीं है जितना मानसिक यंत्रणा सहते हुए तिल-तिल करके मरना।

विजयेंद्र की पत्नी ने दस-बारह दिन इसी शोकमयी स्थिति में बिताए, फिर उसने मन ही मन कुछ विचार किया और एक नये संकल्प के साथ अपनी गुफा से निकल पड़ी। अब वह जगह-जगह घूमकर सभी जीव-जंतुओं को यही समझाया करती है-यदि जीवन को सुखी बनाना है, सफल बनाना है तो न केवल शारीरिक स्वास्थ्य का ध्यान रखो वरन् मन को भी प्रसन्न और विकारों से रहित बनाओ ! ईर्ष्या, द्वेष, घमंड, कुढ़न, काम, क्रोध, लोभ आदि भी रोग हैं। ये मन के रोग शरीर के रोगों से अधिक भयानक हैं। शारीरिक रोग तो दिखाई दे जाते हैं और हम उनका उपचार कर लेते हैं, पर मन के रोग ऐसे घातक होते हैं कि दिखायी नहीं देते। ये धीरे-धीरे चुपचाप हमारे शरीर को और शक्तियों को खोखला बना डालते हैं, हमें बरबाद कर देते हैं।

बार-बार समझाए जाने से उस वन के प्राणी विजयेंद्र की पत्नी की बातों के महत्त्व को समझने लगे हैं और उसके बतलाए मार्ग पर चलने की कोशिश करते हैं। विजयेंद्र की पत्नी पति के प्रति यही अपनी सच्ची श्रद्धांजलि मानती है।



बच्चों की समस्याओं के मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक समाधान



बच्चों में भोजन की स्वस्थ आदतें डालें

- पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य

एक ओर जहाँ बच्चों के रोगों के डॉक्टर अक्सर यह शिकायत करते हैं कि बाल रोगों का अधिकांश कारण माँ का अंध ममत्व रहता है, वहीं दूसरी ओर माताएँ अक्सर यही शिकायतें - चर्चाएँ करती रहती हैं कि उनका बच्चा तो कुछ खाता ही नहीं, दुबला होता जा रहा है।

माताओं का यह तो कर्तव्य अपने स्थान पर सर्वथा उचित है कि वे अपने बच्चों के विकास व बुद्धि के लिए उन्हें उपयुक्त भोजन उपलब्ध कराएँ, परंतु भोजन के प्रति अधिकांश माताओं का दृष्टिकोण व ज्ञान उपयुक्त न होने के कारण एवं बच्चों को अधिकाधिक खिला-खिलाकर उनके पेट में ठूसते रहने की लालसा के कारण बेचारे बच्चे चाहे प्रारंभ में दुबले न हों, परंतु अधिक खा जाने के कारण रोगग्रस्त हो, अवश्य ही दुबला जाते हैं। डॉक्टरों की चिंता, माँ की अधिक खिलाने की इच्छा व बच्चे का हठ, इन तीनों के बीच कोई सामंजस्य न रह पाने से बच्चों में भोजन के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण नहीं बन पाता। उनकी आदतें यदि शुरू में ही नहीं सुधारी जाती तो वे बाल रोग विशेषज्ञों की समस्याएँ बढ़ाते ही रहेंगे। अतः बच्चे के अभिभावकों, माता-पिताओं के लिए यह उपयोगी होगा कि वे भोजन करने-कराने का उद्देश्य व उपयोग समझकर तदनुरूप ही अपने बच्चों में भी स्वस्थ संस्कार डालने का प्रयास करें।

भोजन इसलिए किया जाता है कि इससे शरीर को निरंतर शक्ति प्राप्त होती रहे, ताकि शारीरिक वृद्धि व विकास के लिए जो अतिरिक्त शक्ति की आवश्यकता रहती है, उसकी पूर्ति होती रहे एवं शरीर द्वारा नित्य प्रति किए जाने वाले कार्यों से होने वाले शक्ति हास की पूर्ति होती रहे। अतः इस दृष्टि से जो पदार्थ उपयोगी हों, उन्हें ही हमारे भोजन में सम्मिलित किया जाना चाहिए। जन्म से लेकर ७-८ माह के अंदर बच्चों के दाँत निकल आते हैं व उनकी हड्डियों का विकास होना प्रारंभ हो जाता है। प्रारंभ में बच्चा बड़े वेग से बढ़ता है। उसके शरीर के विभिन्न अवयवों व अस्थियों की वृद्धि होती है। अतः इस अवसर पर बच्चों को अधिक वसायुक्त एवं कैल्सियम वाले पदार्थ दिए जाने चाहिए और बड़े होने पर बच्चे अधिक खेलते-कूदते हैं तथा उन्हें शरीर का अधिक श्रम करना पड़ता है, इससे शारीरिक शक्ति का हास होता है, अतः इसकी क्षतिपूर्ति के लिए भी बच्चों को अधिक पुष्टिकारक भोजन की आवश्यकता रहती है। साधारणतः बच्चों को भोजन में दूध, दूध की बनी चीजें, अन्न (गेहूँ, जौ, मक्का, ज्वार, बाजरा, चावल आदि) दालें व कुछ फल (सेव, नारंगी, लीची आदि), साग-सब्जी (हरी भाजी कंद आदि) दी जानी चाहिए।

दूध बच्चों के लिए आवश्यक भोजन माना गया है; क्योंकि इसमें बच्चे की वृद्धि के लिए आवश्यक सभी तत्व विद्यमान रहते हैं। वैसे दूध गाय, भैंस, बकरी किसी का भी अच्छा रहता है, परंतु गाय के दूध में प्रोटीन व लवण अधिक होने से वह अधिक उपयोगी रहता है। दूध एवं हरी सब्जी, दालों एवं अन्नादि के शाकाहारी भोजन में आवश्यक सभी तत्व मिल जाते हैं। बच्चों को निश्चित समय पर, निर्धारित मात्रा में यदि शाकाहारी भोजन दिया जाता रहे तो वे स्वस्थ व पुष्ट बने रहते हैं। इस दृष्टि से बच्चों में सदैव ही इस तरह के संस्कार डाले जाने चाहिए कि वे खाने योग्य पदार्थों के सेवन की ही अपनी आदत बनाएँ। सादा, ताजा, बिना दुर्गंध के भोजन को भगवान कृष्ण ने गीता में सात्त्विक भोजन बताया है। इस तरह का भोजन ही अधिक अच्छा व उपयोगी है। बच्चों में प्रारंभ से ही ऐसे संस्कार डाले जाने चाहिए कि वे भोजन शरीर व स्वास्थ्य के लिए करें न कि स्वाद व जीभ के लिए। स्वाद में अच्छे लगने वाले मसालेदार, चटपटे जायकेदार पदार्थों के सेवन से बच्चों की पाचनशक्ति भी क्षीण होती है व तरह-तरह के रोग इससे हो जाते हैं।

बच्चों में अधिकाधिक खाने खिलाने की समस्या तो बाद में आती है, पहले तो माताओं के समक्ष यह चिंता मुख्य रहती है कि वे अपने बच्चे में भोजन के बारे में स्वस्थ आदतें डालें। शैशवावस्था में बच्चा माँ का दूध छोड़ने को प्रथमतः तो तैयार नहीं होता व माताएँ जब स्तन से दुग्धपान छुड़ा भी देती हैं तो वह बोतल का दूध व पेय पदार्थों को ही प्रिय समझे रहता है व ठोस भोज्य पदार्थ ग्रहण नहीं करता। बच्चों के प्रारंभिक काल में तो माँ का दूध तथा ऊपर का दूध उपयुक्त रहता है, परंतु बाद में जैसे-जैसे वह बढ़ता रहता है, उसके शरीर की वृद्धि एवं उसके समुचित विकास के लिए उसे ठोस भोज्य पदार्थ, यथा अन्न, शाक-सब्जी, दाल आदि भी दिए जाने चाहिए। कारण कि इनके बिना उसका स्वास्थ्य व समुचित विकास प्रायः असंभव ही रहता है।

शिशु के बढ़ते शरीर की आवश्यकता को देखते हुए ठोस भोज्य पदार्थों की आवश्यकता पड़ने लगती है। बिना इनके उसका शारीरिक विकास अपेक्षानुरूप नहीं हो पाता। ठोस भोज्य पदार्थ खिलाना प्रारंभ करना अपने आप में एक बड़ा काम रहता है व इसीलिए शायद बच्चों को प्रथम बार ठोस भोजन खिलाने के कार्य को पर्व के रूप में मनाया जाता है, जिसे 'अन्नप्राशन' के नाम से जाना जाता है।

जब एक बार बच्चा ठोस भोज्य पदार्थ ग्रहण करना प्रारंभ करता है तो फिर माँ-बाप के समक्ष दूसरी समस्या यह आती है कि बच्चा स्वयं के हाथ से भोजन नहीं खाता। इसके लिए बड़े-बूढ़े उसको लाड़-प्यार से खुद खिलाते रहते हैं। यह प्रवृत्ति थोड़े समय के लिए तो ठीक है, परंतु अधिक समय तक लाड़-प्यार बच्चों को बिगाड़ देगा व उनमें भोजन तो क्या, हर काम करने के लिए दूसरों पर निर्भर रहने की आदत डाल देगा। अतः जितनी जल्दी संभव हो सके, अभिभावकों एवं मुख्यतः माँ को यह प्रयास करना चाहिए कि बच्चा अपना भोजन स्वयं ही करे। कई घर परिवारों में बच्चों को भोजन कराने खिलाने के लिए बड़ी चिरौरियाँ-मिन्नतें की जाती हैं। इस तरह बड़ों का शौक व वात्सल्य चाहे पूरा होता सा उन्हें दीखे, परंतु बच्चों में ठीठता आ जाती है व फिर यह ऐसा संस्कार बन जाता है, जो प्रायः हर काम के लिए खुशामद कराता रहता है। अतः बच्चों को भोजन के लिए आग्रह प्रस्ताव तो करना चाहिए, परंतु इसके लिए उनकी निरंतर खुशामद नहीं की जानी चाहिए एवं तनिक कठोरता की भी आवश्यकता हो तो उसका उपयोग कर बच्चों को भोजन की आदतें डालनी चाहिए।

कभी-कभी यह भी होता है कि कतिपय परिवारों के बच्चों में दिन में कई बार या यों कहा जाए कि दिन भर खाते रहने की भी जो आदत बन जाती है, यह कोई स्वस्थ आदत नहीं। ऐसे बच्चों को बहुधा पेट की बीमारियाँ हो जाती हैं। अधिक भोजन से बीमारी का उपचार तो किया-कराया जा सकता है, परंतु शारीरिक बीमारी से अधिक नुकसानदायक बात यह होती है कि उनकी बार-बार खाते रहने की आदत बन जाती है। अतः माँ-बाप अपने बच्चों में ऐसे संस्कार डालें कि बच्चे अपने नियत समय पर ही खाएँ, पिएँ व उसके बाद कभी भी, चाहे घर में मेहमान आएँ या माँ-बाप के साथ मेहमानी में वे जाएँ, न खाएँ-पीएँ दूसरे आग्रह भी करें तो नम्रता से मना कर दें। इसके लिए माँ-बाप को चाहिए कि घर में बच्चों की संख्या व अपनी आर्थिक स्थिति को देखते हुए ऐसी व्यवस्था बनाएँ, जिससे बच्चों को खान-पान का अभाव न रहे तथा अपनी वित्तीय सीमा में रहते हुए सादा भोजन की ही व्यवस्था करने एवं बच्चों को सही ढंग से सस्नेह यदा कदा न खाते रहने की सीख दें।

बच्चों में यह बात अच्छी तरह जमा दी जानी चाहिए कि भोजन सादा रहे, पर पुष्टिकारक व स्वास्थ्यप्रद हो, कारण कि हम भोजन पूरे शरीर की पुष्टि के लिए करते हैं जीभ की तुष्टि के लिए नहीं।



कहानी पंचम दिवस



॥ प्रति यः शासमिन्वति ॥ -ऋग्वेद १।५४।१।७

जो अनुशासन पालता है, वही शासन करता है। शासन करना चाहो तो स्वयं अनुशासन सीखो।



एक थाली है उल्टी पड़ी, फिर भी है मोतियों से भरी। फिरती है थाल चारों ओर न मोती गिरे और न हो कोई शोर। बताओ क्या ?

मोटा गुल्लू

चन्दो चुहिया अपने इकलौते बच्चे को प्यार से गुल्लू कहकर पुकारती थी। इकलौता होने के कारण चंदो उसको कुछ ज्यादा प्यार करती थी। उसके अत्यधिक लाड़-प्यार ने गुल्लू को बिगाड़ दिया था। वह गुल्लू का सहयोग न लेकर सारे काम खुद ही भाग-भागकर करती, भले ही थककर चूर-चूर हो जाए। वह गुल्लू को खूब खाना खिलाती, कई बार खुद भूखी रह जाती, उसे घर से बाहर न निकलने देती। उसके बाहर जाने पर उसे लगातार यही डर बना रहता कि कहीं वह रास्ते में पिचक न जाए, कहीं पूसी मौसी उसे पकड़ न ले। चंदो के इस अंधे दुलार का फल यह हुआ कि गुल्लू कामचोर, पेटू और डरपोक बन गया।

बचपन में जो आदतें पड़ जाती हैं वे बड़े होने पर विकसित होती है इसीलिए बुद्धिमान माता-पिता बचपन से ही अपने बच्चों को अच्छी बातें सिखाते हैं, उनकी गलतियों को

बचपना कहकर बढ़ावा नहीं देते। चंदो अब गुल्लू को यदि कुछ सिखाने की कोशिश भी करती तो वह कानों पर उतार देता कुछ भी सीखने का करने का उसका मन न करता। उसे तो बस दो ही काम अच्छे लगते। खाना और पड़े रहना।

गुल्लू दिन पर दिन मोटा होता जा रहा था। पड़ौसी बच्चे उसे मोटूराम कहकर चिढ़ाते। चंदो को यह बहुत बुरा लगता। वह सोचती हाय, ये मेरे लाल को नजर लगा देंगे, इसलिए वह अपने पड़ोसियों से कहती - बहिन, मेरा लाल गुल्लू तो कुछ खाता पीता ही नहीं जो भी लाती हूँ, सब इधर-उधर पड़ा रहता है।' पड़ौसियों ने उसके सामने तो सहानुभूति दिखाती पर बाद में हँसती, मजाक बनाती और आपस में कहती- 'हाय बेचारा गुल्लू-दिनभर नहीं खाता पर फिर भी मोटा होता जाता है।' एक दिन चंदो गुल्लू और पड़ौस के कुछ बच्चों के साथ किसी दावत में गई। वहाँ सभी ने छककर खाया और चटखारे भरते हुए घर वापिस लौटे। रास्ते में पूसी मौसी से भेंट हो गई। वह

उनके आने की घात लगा बैठी थी। पूसी को देखकर सारे बच्चे झट से भाग छूटे पर गुल्लू कोशिश करके तेजी से नहीं भाग पाया। चंदो उससे बार-बार भागने के लिए कह रही थी पर थोड़ा-सा भागने के बाद ही उसकी साँस फूल गई। आखिर चंदो ने उसे धक्का देकर नाली में गिरा दिया तब कहीं जाकर वह पूसी के पंजे से बचा।

घर जाकर चंदो ने गुल्लू को खूब डाँटा वह कह रही थी- मैं तुम्हारे पीछे-पीछे आखिर कब तक लगी रहूँगी। तुम और कुछ चाहे सीखो या न सीखो पर अपना बचाव करना तो सीख लो, नहीं तो किसी दिन जान से ही हाथ धोना पड़ेगा।

माँ ने आज तक कभी गुल्लू को नहीं डाँटा था। वह रुआँसा हो गया और बोला-

‘माँ, मुझसे भागा नहीं जा रहा था।

मैं करूँ भी क्या, जरा-सा चलता हूँ, दौड़ता हूँ, मेरा साँस फूलने लगता है जरा-सा काम करता हूँ, थक जाता हूँ।’

गुल्लू की बातें सुनकर चंदो चिंता से भर उठी। ‘आह बेटे, ये तो कमजोरी के लक्षण हैं। कल ही तुम्हें ननकू दादा को दिखाऊँगी’ वह बोली।

ननकू पड़ोस का बुढ़ा चूहा था। वह बड़ा अनुभवी था। बीमार होने पर सभी चूहे उसी से सलाह लेते थे और स्वस्थ हो जाते थे।

दूसरे दिन ननकू दादा ने आकर गुल्लू की अच्छी तरह जाँच की। उसे कोई बीमारी न थी। जगह-जगह उसके शरीर पर चर्बी लटकी पड़ रही थी। उसी के कारण चलने-फिरने में परेशानी होती थी। ननकू पूछने लगा—‘बेटे, तुम क्या-क्या काम करते हो?’

जवाब दिया चंदो ने बोली- क्या बताऊँ दादाजी, जरा-सा काम करता है तो हॉफने लगता है यह। इसलिए मैं इससे कुछ काम ही नहीं कराती।’

ननकू बोला- बस यही तुम गलती कर रही हो। तुम्हारा बेटा किसी रोग का शिकार नहीं है—अधिक खाने का बदहजमी का अपच और आलस का शिकार है।’

मैं समझी नहीं दादाजी चंदो कहने लगी। ननकू उसे समझाने लगा देखो, अधिक खाने से, खाकर पड़े रहने से शरीर बीमारियों का घर बन जाता है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है कि अधिक न खाएँ, सारे दिन न खाएँ और श्रम करके खाए हुए को पचाएँ। जो खूब श्रम करता है, उसका खाना अच्छी तरह पचता है, जिससे शुद्ध खून बनता है और शरीर बलिष्ठ होता है।

‘बात तो आप ठीक कहते हैं, चंदो बोली। ‘तुमने अपने बेटे में खूब खाने की तो आदत डाली है पर काम करने की नहीं। इसलिए उसके शरीर पर चर्बी बढ़ती जा रही है। यह स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं। इससे अनेक बीमारियाँ पनपने लगती हैं, तुम इसका जल्दी ही इलाज करो, ननकू कह रहा था।

‘क्या इलाज करूँ दादाजी’ रुआसी होकर चंदो बोली। ननकू ने समझाया - समय से खाना दो। बार-बार और स्वाद-स्वाद में अधिक खाने की आदत छुड़ाओ। गुल्लू को काम में लगाए रखो। सुबह शाम इसे दो मील घुमाने ले जाओ। कसरत कराओ। कुछ ही दिनों में इसकी चर्बी घट जाएगी।

चंदो ने धन्यवाद देकर ननकू को विदा किया, फिर वह गुल्लू को सुधारने में जुट गई। उसकी कामचोरी की, अधिक खाने की आदत छुड़ाने में उसे बड़ा श्रम करना पड़ा, मन को कठोर बनाना पड़ा। पर अंत में चंदो अपने काम में सफल ही रही। छः महीने की लगातार कौशिश से गुल्लू दूसरे बच्चों की तरह फुर्तीला और काम करने वाला बन गया। चंदो अब कभी गुल्लू से अधिक खाने का भी आग्रह नहीं करती। यह सब समझ गई है कि कम खाने से कोई हानी नहीं होती। ठूस-ठूस कर खाने से ही बीमारियाँ शरीर में घर करती हैं।



पहेली का उत्तर – आसमान और तारे



कहानी षष्ठम दिवस



॥ श्वसित्यप्शु हंसो न सीदन् ॥ —ऋग्वेद १ । ६५ । ६६॥

हंस की तरह गुण ग्राहक बनो । केवल उपयोगी बातों को ही ग्रहण करो ।



कमर कस बुढ़िया रानी, रोज सवेरे चलती है! सारे घर में घूम घूम के, रोज सफाई करती है ।

तोता चला शहद खाने

स्वस्ति और ऋचा के घर के सामने एक बहुत बड़ा बाग था । वहाँ आम और अनार के पेड़ लगे हुए थे । मार्च का महीना आया, आम के वृक्ष पीले-सुनहरे बौरों से लद गये । अनार के पेड़ भी लाल फूलों से सज उठे । धीरे-धीरे फूल बड़े होने लगे और उनमें फल आने लगे । उनकी खुशबू से आकर्षित होकर बहुत से भवरे, मधुमक्खियाँ तितलियाँ, तोते, कोयल, आदि उस बाग में आने शुरू हो गये ।

जीतू नाम के एक तोते को अनार का पेड़ बड़ा ही अच्छा लगता था । वह सारे दिन उस पर बैठा रहता । कच्चे अनारों को कुतर-कुतर कर गिराता रहता । उसी पेड़ पर चन्दा नाम की एक तितली भी प्रायः आती थी । वह फूल-फूल पर मँडराती उसका रस चूसती । धीरे-धीरे जीतू और चन्दा की मित्रता हो गयी । एक दिन चन्दा थक कर पेड़ पर बैठी थी । फूलों का रस पीने के लिये उसने

मीलों का चक्कर लगाया था । जीतू ने पूछा- ‘चन्दा दीदी ! आज तुम बोलती नहीं, बीमार हो क्या ?’

‘नहीं भैया ! बीमार तो नहीं हूँ, पर आज बड़ी थक गयी हूँ । कई मीलों तक घूमी जो हूँ ।’ चन्दा ने अपनी मूँछों को फड़फड़ाते हुए कहा ।

‘दीदी ! तुम फूल-फूल पर मँडराती हो ? देखो मेरी तरह बैठकर ही फल खाया करो ।’ अधपके अनार को कुतरते हुए जीतू बोला । पर मैं फल खा तो नहीं सकती ! मैं तो केवल शहद ही ले सकती हूँ ।’ चन्दा कहने लगी । ‘शहद कैसा होता है यह ?’ जीतू आश्चर्य से बोला । उसने तो शहद का नाम भी नहीं सुना था । शहद बड़ा मीठा होता है । बड़ा ही गुणकारी होता है । अमृत जैसा होता है ।’ चन्दा लगातार प्रशंसा करती जा रही थी ।



यह सब सुन-सुन कर जीतू को बड़ा दुख हुआ कि उसने शहद आज तक क्यों नहीं चखा ? किसी भी प्रकार से शहद चखने के लिये दीवाना हो उठा । मैं अभी पता करता हूँ कि कैसा होता है शहद ?' जीतू ने कहा और जाकर एक बड़े से सुन्दर फूल पर बैठ गया, जिस पर तितली कुछ देर पहले बैठी थी । जैसे ही तोते ने चोंच चलाई कि फूल बेचारा डाल से टूटकर नीचे गिर पड़ा । फिर वह दूसरे फूल पर बैठा, तो उसका भी वही हाल हुआ । यह देखकर तितली रूँआसी हो गयी । भरिये गले से, आँखों में आँसू भरकर बोली- 'बस करो अब ! रहने दो, इस तरह तो सारे के सारे फूल टूटकर नीचे गिर पड़ेंगे ।'

“पर फिर मैं शहद कैसे पीऊँगा ?” जीतू बोला ।

‘इस तरह से तो शहद नहीं पी सकते भैया ! वास्तव में बात यह है कि तुम्हारे मेरी तरह लम्बी सूँड़ नहीं है । अतएवतुम फूलों का रस कैसे पी सकोगे ?’ चन्दा दुःखी मन से बोली ।

‘पर तुमने तो मुझे शहद के नाम से बहुत ही ललचा दिया है । अब उसे पाने का तुम्हीं बताओ कोई तरीका ?’ जीतू अपने पंख फड़फड़ाकर कहने लगा ।

‘पर मैं तो शहद इकट्ठा करती नहीं । फूलों से ही अपनी सूँड़ लगाकर पी जाती हूँ, कैसे चखा पाऊँगी तुम्हें ?’ अपने सिर पर हाथ रखकर सोचती हुई चन्दा बोली ।

‘तो फिर शहद खाने-पीने का कोई उपाय नहीं है क्या ?’ बड़े ही निराश स्वर में जीतू पूछने लगा ।

चन्दा सहसा बोल पड़ी-- ‘हाँ । एक उपाय है, याद आया । मधुमक्खी भी तो फूलों से रस लेती हैं । वे उससे शहद बनाती हैं और अपने छत्ते में ही रखती हैं । तुम यदि उनसे विनती करो तो शायद दया करके थोड़ा-शहद वे तुम्हें चखा दें ।’

‘पर कौन मधुमक्खी मेरी बात मानेगी ?’ जीतू बोला ।

‘यह समस्या तो मैं सुलझा सकती हूँ । यामा नाम की एक रानी मक्खी मेरी पक्की सहेली है । यहाँ से एक मील दूर गुलाब के बगीचे में वह रहती है । तुम उससे जाकर मेरा नाम ले देना । वह मधुमक्खी तुम्हें निश्चित ही शहद चखा देगी ।’ चन्दा पंख फड़फड़ाकर कहने लगी ।

जीतू यह सुनकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ । उसने अपनी गर्दन नचायी, पंख चलाये और वह उड़ चला तेजी से गुलाब के बगीचे की ओर ।

यामा मधुमक्खी का छत्ता खोजने में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई। छत्ते के द्वार पर बैठी मधुमक्खियों से उसने अपने आने का सन्देश रानी मधुमक्खी के पास भिजवाया। रानी अन्दर से निकल कर बाहर आयी। ‘मुझे आपकी सहेली चन्दा तितली ने भेजा है। उन्होंने कहा है कि आप मुझे थोड़ा-सा शहद चखा दें।’ जीतू तोता याचना भरी वाणी में बोला।

‘जरूर जरूर!’ यामा मक्खी ने कहा और अपनी सेविकाओं को अन्दर से शहद ले आने का आदेश दिया। वे तुरन्त जाकर शहद ले आयीं। तोता उसे चखते ही झूम उठा। वास्तव में उसने इतनी स्वादिष्ट, इतनी मीठी चीज चखी तक न थी। उसने शहद के लिये यामा मक्खी को बहुत धन्यवाद दिया।

दूसरे दिन भी जीतू अपने आपको न रोक सका और उड़ चला शहद खाने। शहद उसे इतना भाया कि उसका स्वाद आते ही वह अपने आपको रोक न पाता। रोज सोचता कि बस आज चला जाता हूँ, कल नहीं जाऊँगा, पर उससे अपने को रोक न जाता और शहद के लालच में यामा मक्खी के यहाँ दूसरे दिन भी उड़ चलता। सच ही है जो केवल सोचते भर हैं, जैसा सोचते हैं वैसा करते नहीं, वे कभी अपने को अच्छाई के रास्ते पर नहीं चला पाते।

जीतू अब रोज-रोज ही शहद माँगने आने लगा। यामा को यह बुरा लगा। भला रोज-रोज किसी से चीज माँगना क्या अच्छी बात है? आखिर एक दिन उसने कह दिया-- ‘भाई! अब हम आपको शहद नहीं दे पायेंगे।’

यह कहकर यामा छत्ते के अन्दर चली गयी, पर जीतू के मुँह में शहद के लालच से पानी भरा चला आ रहा था। उसने बहुतेरा चाहा कि उड़ चले, पर वह अपने लालच पर विजय न पा सका और वहीं बैठा रहा। बैठे-बैठे रात धिर आयी। अब जीतू से न रहा गया। उसने रात के अन्धेरे में चुपचाप शहद चुराने की सोची। उसने छत्ते के अन्दर अपनी पूरी चोंच घुसा दी, पर यह क्या? उस पर तो तुरन्त अनेकों मधुमक्खियाँ चिपक गयीं। जीतू ने जल्दी से चोंच बाहर निकाली, पर मधुमक्खियों ने पीछा ही न छोड़ा। वे उसकी पूरी की पूरी चोंच पर बुरी तरह चिपक गयी थीं और जोर-जोर से काट रही थीं। चोंच से खून बहने लगा।

‘छोड़ दो छोड़ दो मुझे! जीतू तोता जोरों से चिल्लाया।

‘अरे! यह तो जीतू है।’ अन्धेरे में उसकी आवाज सुनकर यामा बोली और मक्खियों से उसे छोड़ देने के लिये कहा।



जीतू चुपचाप सिर झुकाये रानी मक्खी के सामने बैठा था। आँखें उठाने की भी हिम्मत नहीं हो रही थी। वह रंगे हाथों पकड़ा गया था। चोर चोरी करके दूसरों को अपना मुँह दिखाने की हिम्मत कर भी कैसे सकता है ?’

यामा आवेश में आकर कहने लगी- ‘छिः। कितनी गन्दी बात है। तुम अपने स्वाद पर काबू न रख सके। खाने की चीज के जरा से लालच को न रोक सके। उसके कारण तुम चोरी जैसा भयंकर पाप भी करने से न हिचके। जो अपने स्वाद पर काबू नहीं रख पाता है, दूसरों से अपमान पाता है। तुम्हारी खैर इसी में है कि चुपचाप तुम यहाँ से भाग जाओ फिर कभी चोरी करने की हिम्मत की, तो सारी की सारी मधुमक्खियाँ तुम्हारे शरीर पर चिपक जायेंगी। खा जायेंगी तुम्हें मार डालेंगी तुम्हें।’

जीतू चुपचाप अपना सा मुँह लेकर वहाँ से उड़ आया। इतना अपमान तो जीवन में उसने कभी न सहा था।

वह सोच रहा था कि लालच से बहुत से अवगुण स्वयं आ जाते हैं और प्राणी अनेक पाप करने लगता है। तभी वह दूसरों से तिरस्कार पाता है। मुझे अपनी करनी का, जीभ के स्वाद पर काबू न रखने का उचित ही फल मिला है। जीवन भर के लिये सबक मिल गया। अब मैं खाने की चीजों के लालच में आकर कभी भी गलत काम नहीं करूँगा।

रास्ते में खून से लथपथ अपनी चोंच पर जीतू ने मैना काकी से पट्टी बँधवायी और तब अपने पाप का प्रायश्चित्त करने के लिये भूखा-प्यासा आकर वह अपने कोटर में सो गया।



पहेली का उत्तर – झाड़ू





कहानी सप्तम दिवस



॥ इन्द्रवर्धन्तोअपतुरः ॥ — ऋग० ९ । ६३ । ५॥

जीवन में स्फूर्ति, उत्साह और साहस बढ़ता रहे । आलसी, प्रमादी और भीरु उन्नति नहीं कर सकते ।



मेरा नाम एक फूल और मिठाई है । बताओ मैं कौन हूँ ?

चींटी और तितली

एक थी चींटी । वह घूमने जा रही थी । चलते-चलते उसे बहुत भूख लगी । इतने में उसे चावल का एक दाना मिला । वह खुश हो गई ।

चींटी ने चावल का दाना मुँह में रखा । आगे चलने लगी । चलते-चलते रास्ते में उसे मूँग का एक दाना मिला । चींटी मूँग का दाना देखकर खुश हो गई ।

चींटी ने सोचा, मूँग और चावल की मैं खिचड़ी बनाऊँगी । उसके मुँह में पानी आ गया ।

यह सोचकर चींटी मूँग का दाना मुँह में रखा । इससे चावल का दाना गिर गया ।

उसने चावल का दाना मुँह में पकड़ा, लेकिन ऐसा करते ही मूँग का दाना गिर गया ।

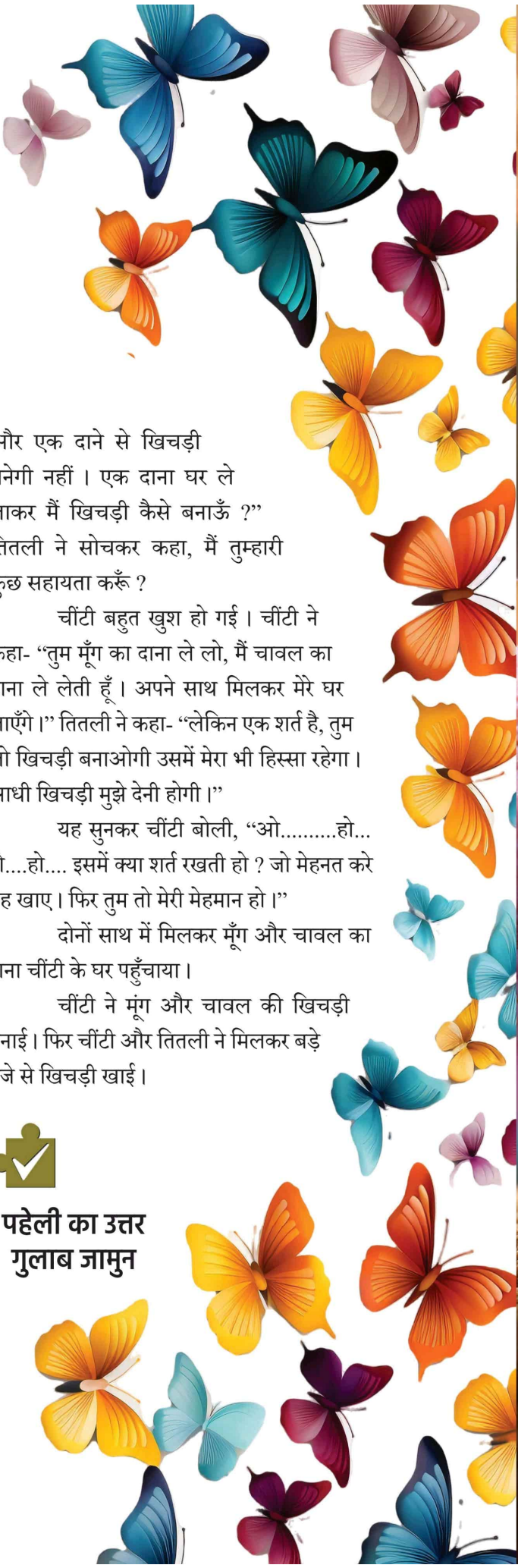
चींटी तो थी छोटी-सी, जरा-सी । उसका मुँह भी छोटा ।

इसलिए मूँग और चावल दोनों के दाने एक साथ उसके मुँह में नहीं आ सके । एक रहे तो दूसरा निकल जाए !

दोनों दाने न ले जाये तो खिचड़ी नहीं बनेगी । इसलिए चींटी ने बहुत कोशिश की । वह थक गई लेकिन दाने मुँह में नहीं आए । चींटी तो निराश हो गई । वह खड़ी खड़ी सोचने लगी ।

इतने में वहाँ से एक तितली निकली । चींटी को निराश खड़ा देखकर तितली ने पूँछा, चींटी बहन, क्यों इस तरह चिंता में हो? चींटी ने कहा- “मुझे खिचड़ी बनानी है, लेकिन मूँग और चावल इन दोनों के दाने मेरे मुँह में एक साथ नहीं आते हैं





और एक दाने से खिचड़ी
बनेगी नहीं। एक दाना घर ले
जाकर मैं खिचड़ी कैसे बनाऊँ ?”
तितली ने सोचकर कहा, मैं तुम्हारी
कुछ सहायता करूँ ?

चींटी बहुत खुश हो गई। चींटी ने
कहा- “तुम मूँग का दाना ले लो, मैं चावल का
दाना ले लेती हूँ। अपने साथ मिलकर मेरे घर
जाएँगे।” तितली ने कहा- “लेकिन एक शर्त है, तुम
जो खिचड़ी बनाओगी उसमें मेरा भी हिस्सा रहेगा।
आधी खिचड़ी मुझे देनी होगी।”

यह सुनकर चींटी बोली, “ओ.....हो....
हो....हो.... इसमें क्या शर्त रखती हो ? जो मेहनत करे
वह खाए। फिर तुम तो मेरी मेहमान हो।”

दोनों साथ में मिलकर मूँग और चावल का
दाना चींटी के घर पहुँचाया।

चींटी ने मूँग और चावल की खिचड़ी
बनाई। फिर चींटी और तितली ने मिलकर बड़े
मजे से खिचड़ी खाई।



पहेली का उत्तर
गुलाब जामुन





मूल्यपरक कविता स्वास्थ्य का राज

एक बार नृप शीलभद्र तीर्थाटन को जाते थे ।
जो होता उपलब्ध मार्ग में, वह सब कुछ खाते थे ॥
एक जगह विश्राम किया, देखा वह ऋषि आश्रम था ।
वहाँ अलौकिक, शांति, प्रकृति का आँगन वह मधुरिम था ॥

दैवयोग से यहाँ बहुत बीमार हो गये राजा ।
यद्यपि मिलता था विशेष भोजन स्वदिष्ट व ताजा ॥
वैद्य बुलाये गये शहर से, दौड़ धूप सबने की ।
आश्रम बहुत भला था, इच्छा और हुई रुकने की ॥

किंतु कार्यक्रम आगे का भी तो करना था पूरा ।
वर्ना तीर्थाटन रह जाता अबकी बार अधूरा ॥
पूरी हुई यात्रा, लौटे नृपति राजधानी को ।
पर न भूल पाये वे वैद्य खोज की हैरानी को ॥

उने उस गाँव के लिए वैद्य की नियुक्ति कराई ।
रहे न कोई अभाव प्रजा को अपनी टेक निभाई ॥
किंतु महीनो बीते कोई नहीं दवा को आया ।
ऐसा क्यों है वैद्यराज ने कारण पता लगाया ॥

तब मालुम हुआ कि हुयी ही नहीं कहीं बीमारी ।
अतः पडी न जरूरत औषधि की बीती ऋतु सारी ॥
तब आचार्य प्रवर से उनने पूछा इसका कारण ।
किया उन्होंने वैद्यराज के भ्रम का उचित निवारण ॥

वे बोले बीमार कोई होता ही नहीं यहाँ पर ।
क्योंकि सभी खाते है केवल कड़ी भूख लगने पर ॥
और परिश्रम करते हैं सब मिलकर सारे दिन ही ।
यों रहते है स्वस्थ्य सभी हम औषधियों के बिन ही ॥

तब बोले वैद्यजी करूँगा क्या मैं यहाँ ठहरकर ।
जिया न जाता निष्क्रिय जीवन लौट जाऊँगा सत्वर ॥
लौटे शहर और राजा को सारी बात बताई ।
राजा भी खुश हुए देख जनता की यह चतुराई ॥

- माया वर्मा





गीत हम हिन्दुस्तानी बच्चे

हम हिन्दुस्तानी बच्चे ऊँचा चरित्र बनाया करते हैं ।
दुनियाँ को शुभ आदर्शों की हम राह दिखाया करते हैं । ।

जब भक्ति करी तो ऐसी करी, भगवान बचाने खुद आये ।
इतिहास बताता है हम ध्रुव, प्रहलाद कहाया करते हैं ।
हम हिन्दुस्तानी बच्चे ऊँचा चरित्र बनाया करते हैं ।

जब धर्म मिटाता है कोई, और होती जरूरत रक्षा की ।
तब हम हँसकर दीवारों में जिंदा चुन जाया करते हैं ।
हम हिन्दुस्तानी बच्चे ऊँचा चरित्र बनाया करते हैं ।

देते हैं कठोर परीक्षा हम, गुरु को न कभी भी निराश किया ।
बन कर के शिवाजी शेरनी को भी हम दुह लाया करते हैं ।
हम हिन्दुस्तानी बच्चे ऊँचा चरित्र बनाया करते हैं ।

- माया वर्मा





अभ्यास के बिन्दु

- बच्चों को अधिकाधिक खिलाकर उनके पेट में ढूँसने की लालसा उन्हें बीमार बनाती है ।
- बच्चों में भोजन के स्वस्थ और विवेकपूर्ण संस्कार डालें ।
- बच्चों की बाढ़ को ध्यान में रखकर उसे संतुलित, सुपाच्य और पौष्टिक भोजन दें ।
- दूध, अन्न, फल, सब्जी उनके भोजन में हों ।
- गाय का दूध बच्चों के लिए सर्वश्रेष्ठ है ।
- फास्ट फूड, जंक फूड, बासी भोजन, सॉफ्ट ड्रिंक, नशीली वस्तुएं, डब्बा बंद भोज्य पदार्थ की आदत ना डालें ।
- बच्चा अपना भोजन स्वयं करें ऐसा अभ्यास डालें ।
- भोजन कराने के लिए लालच देना, मित्रों करने से बच्चों में डीढ़ता आ जाती है ।
- भोजन कई बार, हर एक के साथ भोजन करना, दिनभर खाते रहने की आदत पेट की बीमारी पैदा करती है ।
- बच्चों को ईमानदारी की कमाई का अन्य खिलाएं ।
- बच्चा भूखा होने पर खुद भोजन की मांग करेगा आप जबरदस्ती ना करें ।

